कुरुक्षेत्र

दिसम्बर 1993 तीन रुपये

गांवों में बेरोजगारी :

समस्या और समाधान

सूखे वाले क्षेत्रों में रोजगार गारंटी योजना

✍मोहित सिंह

भारत सरकार ने सूखे से प्रभावित होने वाले देश के 1752 प्रखंडों में इस वर्ष गांधी जयन्ती (2 अक्टूबर) से मजदूरों को कम से कम सौ दिन तक रोजगार सुलभ कराने की एक योजना लागू की है। इसके लिए चालू वर्ष में एक हजार करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।

इस योजना के तहत मजदूरों को उनके राज्य में निर्धारित न्यूनतम मजदूरी दी जायेगी। इस पर खर्च का 20 प्रतिशत भाग राज्य सरकारों को जुटाना होगा और अस्सी प्रतिशत खर्च भारत सरकार देगी।

इस योजना के तहत मजदूरों को कम से कम 20 व्यक्तियों के समूह में अपने क्षेत्र के प्रखंड विकास अधिकारी से काम की मांग करनी होगी। प्रखंड विकास अधिकारी विशेष परिस्थिति में दस मजदूरों के समूह को भी यह सुविधा दे सकते हैं।

प्रखंड विकास पदाधिकारियों को दिये गये निर्देश के अनुसार उन्हें इस मद पर आबंटित धनराशि का उपयोग लोक-उपयोगी काम कराने के लिये कराना होगा जैसे — जल-निकासी, जमीनों का समतलीकरण, जल भण्डारण, गांव की सड़क व गलियों का विकास, वृक्षारोपण, नाले-नालियों का सुधार, सार्वजनिक जमीन की सुरक्षा, जलाशयों की खुदाई और मरम्मत आदि का काम कराया जा सकता है। स्कूल, अस्पताल, पुस्तकालय, पंचायत भवन आदि के निर्माण में भी बेरोजगार मजदूरों को लगाया जा जा सकता है।

यह योजना सुखाड़ वाले प्रखंडों में लागू की जा रही है क्योंकि वहां खाद्यान्न का अभाव हो जाता है और कीमतें तेज हो जाती हैं। इसलिये इन मजदूरों को मजदूरी का कुछ भाग अनाज के रूप में दिया जायेगा। इसके लिए उन्हें विशेष राशन कार्ड दिए जाएंगे।

यह अनाज उन्हें सरकारी सस्ते गल्ले की दुकानों से दिया जायेगा और 50 पैसे प्रति किलो सस्ता होगा।

यह योजना गांव में गरीबी और बेरोजगारी हटाने के लिये पहले से जारी जवाहर रोजगार योजना, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम आदि के अतिरिक्त होगी।

इस योजना को अमल में लाने के लिये प्रत्येक विकास खंड में एक समिति बनायी जायेगी जो पंचायत समिति की देख-रेख में काम करेगी।

सरकार इस योजना के प्रचार -प्रसार में गांव में काम करने वाले स्वयंसेवी संगठनों का सहयोग लेना चाहती है। साथ ही, गरीब मजदूरों का संगठन भी बनाना चाहती है। यह उल्लेखनीय है कि दक्षिण एशिया सहयोग संगठन, सार्क के सदस्य देशों के राष्ट्राध्यक्षों के पिछले शिखर सम्मेलन में तय किया गया था कि इस सदी के अन्त तक गरीबी की रेखा के नीचे के सभी नागरिकों को इस रेखा से ऊपर लाया जाए।

उस सम्मेलन में यह भी तय किया गया था कि गरीबी उन्मूलन की दिशा में दक्षिण एशिया के देश आपस में अनुभवों का आदान-प्रदान करें और उसके आधार पर एक ऐसी रणनीति तैयार की जाए ताकि एक दशक के बाद एक भी परिवार गरीबी की रेखा के नीचे न हो।

ए-1, नीतिबाग,
नई दिल्ली

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय का प्रमुख मासिक

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए। लघु कथाओं का भी स्वागत है। अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है। 'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने व अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

वर्ष 39 अंक 2 अग्रहायण-पौष 1915 दिसम्बर 1993

संपादक	:	राम बोध मिश्र
सह संपादक	:	बलदेव सिंह मदान
उप संपादक	:	ललिता जोशी

उप निदेशक (उत्पादन)	:	एस.एम. चहल
विज्ञापन प्रबंधक	:	बैजनाथ राजभर
व्यापार व्यवस्थापक	:	जॉन नाग
सहायक व्यापार व्यवस्थापक	:	एडवर्ड बैक
आवरण सज्जा	:	आर.के. टंडन

एक प्रति : 3.00 रु० वार्षिक चंदा : 30 रु०

इस अंक में

ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ती बेरोजगारी दूर करने के उपाय 2
राम बिहारी विश्वकर्मा

गांवों में बढ़ती बेरोजगारी 5
भुवनेश्वर द्विवेदी

बेरोजगारी समाधान के लिए मानसिकता में बदलाव जरूरी 9
सुरेन्द्र

लघु एवं कुटीर उद्योग : भारतीय अर्थव्यवस्था की कुंजी 11
डा. मुन्नी लाल

ग्रामोद्योग : वर्तमान स्थिति और संभावनाएं 15
प्रो. आलोक नाथ झा

टीलों (कहानी) 16
हरि वल्लभ बोहरा 'हरि'

ग्रामीण कारीगर : समस्याएं, समाधान और संभावनाएं 18
हरि विश्नोई

ग्रामीण औद्योगिकीकरण : गांवों में बेरोजगारी दूर करने का कारगर उपाय 22
आर्येन्द्र उपाध्याय

गांवों के कायाकल्प में तत्पर जवाहर रोजगार योजना 24
सुरेश सिंह

गेहूं : आहार भी, औषध भी 28
डा. विजय कुमार उपाध्याय

गांवों में बेरोजगारी दूर करने के लिए क्रान्तिकारी परिवर्तन आवश्यक 30
अक्षय कुमार

भारतीय समाज और नारी उत्थान 33
देवेश कुमार शर्मा

गांवों में रोजगार हेतु प्रशिक्षण 35
डा. अजय जोशी

व्यक्तित्व का विकास 37
डा. आनंद तिवारी

शिशु के लिए जहर है गर्भावस्था में धूम्रपान 39
डा. रमाशंकर राजभर

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण विकास मंत्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।
दूरभाष : 384888

ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ती बेरोजगारी दूर करने के उपाय

✍रामबिहारी विश्वकर्मा

देश में औद्योगिकीकरण की रफ्तार हाल के वर्षों में हालांकि काफी तेज हो गयी है, लेकिन अब भी जनसंख्या का अधिकांश भाग ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी सभी लोगों को पर्याप्त काम और रोजगार नहीं मिल पाया है। हालांकि काम करने का अधिकार अभी मौलिक अधिकार का रूप तो नहीं ले पाया है, लेकिन कल्याणकारी राज्य होने के नाते हमारे देश में सभी को पूर्ण रोजगार उपलब्ध कराने के प्रयास किये जा रहे हैं। आठवीं पंचवर्षीय योजना में सरकार ने जो नीति तैयार की है, उसके अंतर्गत इस दिशा में बड़े जोरों पर प्रयास जारी हैं और सरकार सन् दो हजार तीन ईसवी तक पूर्ण रोजगार की स्थिति लाने के लिये कृत संकल्प है।

ग्रामीणों के लिए रोजगार योजना

अनुमान लगाया गया है कि सन् दो हजार ईसवी तक हमारे देश में नौ करोड़ चालीस लाख लोग बेरोजगार होंगे। बेरोजगारों की संख्या में वृद्धि का यह अनुमान देश की आबादी की वृद्धि को ध्यान में रखकर किया गया है। हमारे देश में 1981-91 के दौरान जनसंख्या की वृद्धि की दर 2.1 प्रतिशत थी जबकि श्रमिकों की वृद्धि 2.5 प्रतिशत थी। 1991 में देश की जनसंख्या 93 करोड़ 70 लाख थी, जिसमें से 31 करोड़ 50 लाख लोग रोजगार प्राप्त थे। हाल ही में राष्ट्रीय विकास परिषद ने 18 वर्ष से लेकर साठ वर्ष तक की आयु वाले ग्रामीण निर्धन व्यक्तियों के लिये रोजगार सुनिश्चित करने के बारे में एक योजना की घोषणा की है। यह योजना उन 1752 प्रखंडों में शुरू की जायेगी, जहां पुनर्गठित सार्वजनिक वितरण प्रणाली लागू है। इस तरह की योजना के बारे में प्रधानमंत्री ने 15 अगस्त को घोषणा की थी और इसे 2 अक्टूबर से लागू भी कर दिया गया है। जिन ब्लाकों में इस योजना को लागू करने की घोषणा की गयी है वे ब्लाक सूखाग्रस्त इलाकों, रेगिस्तानी इलाकों, जनजातीय क्षेत्रों और पर्वतीय क्षेत्रों में स्थित हैं और उन्हें देश में सबसे गरीब और दुर्गम क्षेत्र समझा जाता है। इस योजना पर जो भी खर्च होगा, उसमें से 80 प्रतिशत केंद्र और 20 प्रतिशत राज्य सरकार वहन करेगी। इन ब्लाकों में इस योजना को लागू करने के लिये 1993-94 के दौरान केंद्रीय हिस्से के रूप में 2000 करोड़ रुपये रखे गये हैं। केंद्रीय सहायता राशि सीधे जिला ग्रामीण विकास एजेंसी जिला परिषदों को दी जायेगी और इसके बाद राज्य सरकार अपने हिस्से की रकम 15 दिन के अंदर उन्हें उपलब्ध करा देगी। इस योजना का मुख्य उद्देश्य खेतिहर मजूदरों और अन्य ग्रामीण श्रमिकों को वेतन रोजगार उपलब्ध कराना है। ये रोजगार विशेषकर उन दिनों उपलब्ध कराये जाते हैं जब खेतिहर श्रमिक या गांव के मजदूर खेतीबाड़ी का काम कम होने पर गांवों में बेकार बैठे रहते हैं और काम धंधे का इंतजार करते रहते हैं। ऐसी स्थिति में उन्हें कम से कम सौ दिन का रोजगार उपलब्ध कराने का निश्चय किया गया है। ये रोजगार ऐसे ग्रामीण श्रमिकों को उपलब्ध कराये जायेंगे, जिनकी उम्र 18 वर्ष से अधिक और 60 वर्ष से कम हो और जिन्हें वास्तव में काम धंधे की जरूरत है। इस तरह का रोजगार मिल जाने पर कृषि क्षेत्र में लगे ग्रामीण बेरोजगारों को आवश्यक संबल मिल जाता है। सरकार ने इसके लिये एक कार्यक्रम बनाया है जिसके अंतर्गत खेतीबाड़ी के काम में मंदी का दौर आने पर इच्छुक लोग अपने नाम सम्बद्ध पंचायतों मे दर्ज करा देंगे। ऐसे हर व्यक्ति को एक परिवार कार्ड दिया जायेगा, जिसमें परिवार के सदस्यों के नाम दर्ज रहेंगे और यह भी लिखा रहेगा कि उस परिवार के किन-किन सदस्यों को साल के दौरान कहां-कहां काम दिये गये। इस योजना पर ग्राम पंचायतों की ओर से अमल किया जायेगा और ये जिला प्रखंड और ग्राम स्तर पर लागू किये जायेंगे, इनके बारे में मार्गदर्शन, निरीक्षण और नियंत्रण का काम उस जिले के कलेक्टर या उपायुक्त करेंगे। जिला कलेक्टर या उपायुक्त के मार्गनिर्देशन में ऐसी परियोजनायें तैयार की जायेंगी जिनके अंतर्गत हर ब्लाक के लोगों के लिये कुछ आवश्यक काम धंधे उपलब्ध कराये जायेंगे। उन्हें काम ग्रामीण परिवेश की रुचि के अनुसार उपलब्ध कराये जायेंगे जैसे — जमीन और पानी के संरक्षण, बागवानी, वनारोपण और रेशम

के लिये पेड़ उगाने आदि जैसे कार्यक्रम शामिल होंगे। पंचायत समितियां प्रखंड स्तर पर इन सब योजनाओं को लागू करने का काम करेंगी, इसके लिये खंड विकास अधिकारी सम्बद्ध जिला क्लेक्टर अथवा उपायुक्त से आवश्यक निर्देश और मार्गदर्शन प्राप्त करेंगे।

शिक्षित बेरोजगारों को स्वरोजगार योजना

गांवों के पढ़े-लिखे बेरोजगारों के लिये सरकार ने सात लाख छोटे-छोटे उद्योग धंधे कायम करके उनके माध्यम से ग्रामीण युवकों को सहायता देने का कार्यक्रम बनाया है। आठवीं योजना के दौरान इस कार्यक्रम के तहत चौदह लाख लोगों को रोजगार मिल सकेगा।

दैनिक आधार पर इस योजना के अंतर्गत जिन लोगों को रोजगार दिये जायेंगे उनमें सबसे कम वेतन अर्धप्रशिक्षित लोगों को या जिनके पास कोई हुनर नहीं है, ऐसे लोगों को दिये जायेंगे। इन अप्रशिक्षित मजदूरों को वेतन देने के मामले में पुरुष और स्त्री होने को कोई भेदभाव नहीं किया जायेगा। इस वेतन का कुछ हिस्सा अनाज के रूप में दिया जायेगा। अनाज के रूप में दिया जाने वाला वेतन इस बात पर निर्भर करेगा कि खुले बाजार में उस अनाज की कितनी कीमत आंकी जा रही है और अनाज की कीमत उस समय सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत दी जाने वाली उस अनाज की दर से अधिक नहीं होगी।

मंत्रिमंडल के फैसले के अनुसार जवाहर रोजगार योजना के अंतर्गत निर्धारित रकम का 75 प्रतिशत जो कम से कम 2546 करोड़ रुपये से कम नहीं होगा, खर्च किया जायेगा। जवाहर रोजगार योजना के अंतर्गत 120 पिछड़े जिलों में 700 करोड़ रुपये खर्च किये जायेंगे।

शिक्षित युवाओं और बेरोजगारों के लिये एक अलग योजना चलायी जायेगी। इसके अंतर्गत 7 लाख छोटी-छोटी इकाइयां बनायी जायेंगी, जिनमें कम से कम दो व्यक्तियों को अवश्य रोजगार दिया जायेगा। इस तरह की इकाइयां केवल ग्रामीण क्षेत्रों तक ही सीमित नहीं रहेंगी बल्कि वे छोटे-छोटे कस्बों और शहरों में भी कायम की जा सकती हैं। शिक्षित बेरोजगार युवकों को कोई उद्यम शुरू करने के लिये एक लाख रुपये दिये जायेंगे, इसमें से कुल परियोजना का 15 प्रतिशत या साढ़े सात हजार रुपये की अधिकतम की राशि सरकार सब्सिडी के रूप में देगी। परियोजना के अंतर्गत उद्यमियों को प्रशिक्षण और कच्चा माल उपलब्ध कराया जायेगा। उनके तैयार माल को बाजार में सुविधाजनक ढंग से पहुंचाने का भी प्रबंध किया जायेगा। शिक्षित बेरोजगार योजना के अंतर्गत इस समय जो एक लाख बीस हजार इकाइयां देश में कार्यरत हैं उनके अलावा और इकाइयां शुरू की जायेंगी। आठवीं योजना के अंतर्गत लघु उद्योगों के लिये 540 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गयी है।

महिला समृद्धि योजना

सरकार ने एक और योजना महिलाओं के लिये शुरू की है, जिसका नाम महिला समृद्धि योजना रखा गया है जो ग्रामीण महिलाओं को आर्थिक आत्मनिर्भरता उपलब्ध करायेगी। इसके लिये ऐसी हर महिला को 75 रुपये का अनुदान दिया जायेगा जिसने बैंक में तीन सौ रुपये जमा कर रखे हैं। इस कार्यक्रम के जरिये ग्रामीण महिलाओं को डाकखानों या बैंकों में बचत खाते खोलने के लिये प्रोत्साहित किया जायेगा।

ग्रामीण रोजगार योजनाओं का एक सबसे प्रमुख लाभ यह भी है कि युवकों की ऊर्जा का सही ढंग से इस्तेमाल किया जा सकेगा। किसी भी देश के युवक उस देश के आर्थिक विकास की रीढ़ होते हैं और उन्हें सुदृढ़ बनाये बिना हमारी अर्थव्यवस्था सुदृढ़ नहीं हो सकती। ग्रामीण क्षेत्रों के जो युवक शिक्षा प्राप्त करने के बाद अपनी ऊर्जा को इधर-उधर के कामों में खर्च कर देते हैं या उनमें से कई युवक आर्थिक दृष्टि से अपने पैरों पर खड़े न हो पाने की वजह से गुमराह हो जाते हैं और कई बार कुसंगति में पड़ कर उग्रवादी या आतंकवादी बन जाते हैं, उन्हें आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाकर उनकी ऊर्जा का राष्ट्र-निर्माण में भरपूर उपयोग किया जा सकता है जैसे-हाल ही में पंजाब में शिक्षित ग्रामीण युवकों को रोजगार उपलब्ध कराने के लिये उन्हें डेयरी विकास के कार्यों में लगाया गया है। शिक्षित बेरोजगार युवाओं और भूतपूर्व सैनिकों को डेयरी उत्पादन संबंधी कामों के लिये पहले प्रशिक्षण दिया जाता है और उसके बाद उन्हें भैंस खरीदने के लिये ऋण दिया जाता है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत अभी तक दस हजार 6 सौ 64 इकाइयां कायम की जा चुकी हैं। आठवीं योजना के दौरान पंजाब में 16,800 युवकों को दुग्ध उत्पादन के काम में प्रशिक्षित करके उन्हें लाभकारी रोजगार उपलब्ध कराने की योजना में लगाया गया है। इसी प्रकार अन्य राज्यों में भी ग्रामीण क्षेत्रों के युवकों को विभिन्न विकास कार्यक्रमों में शामिल किया जा रहा है जैसे सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम में इस समय आंध्रप्रदेश, बिहार, गुजरात, हरियाणा, जम्मू-कश्मीर, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु

और उत्तरप्रदेश में शिक्षित और अशिक्षित युवकों को शामिल किया जा रहा है। जम्मू-कश्मीर और लेह तथा हिमाचल-प्रदेश में शीत मरूस्थली क्षेत्रों हेतु उपयुक्त टेक्नोलाजी का इस्तेमाल किया जा रहा है। मरूभूमि विकास कार्यक्रम के अंतर्गत 1.15 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में भूमि को समतल बनाने तथा भूमि संरक्षण के उपाय किये गये हैं। लगभग 50 हजार हेक्टेयर जल संसाधन विकास और 2.25 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में वन लगाने तथा चारागाह का विकास करने के कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। सूखाग्रस्त क्षेत्रों के विकास कार्यक्रम पर मार्च 1993 के अंत तक 1417.30 करोड़ रुपये और मरूभूमि विकास कार्यक्रम पर 447.66 करोड़ रुपये खर्च किये जा चुके हैं। इन कार्यक्रमों के जरिये एक ओर तो ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी दूर की जाती है तो दूसरी ओर गरीब युवकों के रोजगार की समस्या को काफी हद तक सुलझाने में मदद मिलती है।

हमारा देश मानव संसाधन की दृष्टि से बहुत समृद्ध देश कहा जा सकता है, तकनीशियनों और वैज्ञानिकों की संख्या की दृष्टि से हमारे देश का स्थान विश्व में तीसरा है और इनमें सबसे अधिक संख्या हमारे युवकों की है। इन युवकों का इस्तेमाल अनेक विशाल कार्यक्रमों में किया जा सकता है। हाल में पर्यावरण तथा पर्यटन जैसे क्षेत्रों में रोजगार के बहुत अवसर उपलब्ध हुए हैं। इस समय देश में डेढ़ करोड़ लोगों को पर्यटन उद्योग में रोजगार मिल रहा है। यदि पर्यटन का हम समुचित ढंग से विकास करें तो इस शताब्दी के अंत तक कम से कम साढ़े तीन करोड़ लोगों को रोजगार उपलब्ध कराया जा सकता है। पर्यटन का बड़ी तेजी से विस्तार हो रहा है और इसमें अधिक से अधिक लोगों को रोजगार मिलने का सुअवसर मिल सकता है। प्राचीन स्मारकों को यदि पर्यटन की दृष्टि से विकसित किया जाये और दूरदराज के क्षेत्रों में पर्यटन स्थलों का विकास किया जाये तो वहां अधिक से अधिक पर्यटकों को आकृष्ट किया जा सकता है और इसमें हजारों युवकों को रोजगार मिल सकता है।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी कहा करते थे कि जब तक हमारे गांवों का उत्थान नहीं होता, तब तक हमारे देश के उत्थान का सपना अधूरा रहेगा। इसी बात को ध्यान में रखकर उन्होंने हर गांव को आत्मनिर्भर इकाई बनाने का सपना संजोया था और उन्होंने इसके लिये चरखे का प्रचार-प्रसार करने का बहुत प्रयास किया था। खादी और ग्रामोद्योग महात्मा गांधी के उसी सपने को साकार करने की दिशा में एक बहुत बड़ा प्रयास है। इस समय देश में 3500 ऐसी संस्थायें हैं जो खादी और ग्रामोद्योग से जुड़ी हुई हैं। कृत्रिम रेशे से तैयार कपड़ों के आ जाने के बावजूद हमारे देश में हथकरघा तथा खादी के वस्त्रों का पर्याप्त महत्व है और अब भी हमारे देश में इनका पर्याप्त उपयोग होता है क्योंकि हमारे देश की जलवायु ऐसी है कि उसमें ये वस्त्र ही अधिक अनुकूल पाये जाते हैं। खादी के कपड़े के अलावा रेशम और ऊनी खादी तथा मिट्टी, टेराकोटा, शंख की कामगारी और हस्तशिल्प के अन्य कई कार्यों में भी पर्याप्त संख्या में लोगों को रोजगार उपलब्ध कराये जा सकते हैं। हथकरघा क्षेत्र में भी लोगों को पर्याप्त रोजगार उपलब्ध कराया जा सकता है। अकेले राजस्थान में ही करीब 38 हजार बुनकरों को रोजगार मिला हुआ है।

1993-94 के बजट में 3306 करोड़ रुपये जवाहर रोजगार योजना के तहत रखे गये हैं। इसके अंतर्गत 11 हजार करोड़ श्रम दिवस का रोजगार उपलब्ध कराया जा रहा है। देशभर में पंचायतों के माध्यम से इस कार्यक्रम को चलाया जा रहा है और इसका अधिक से अधिक लाभ बेरोजगार युवकों को पहुंचाया जा सकता है। हमारे देश में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से जो रोजगार संबंधी योजनायें चलायी गयी हैं, उनमें हालांकि ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार पर बल अवश्य दिया गया लेकिन उसके बावजूद अभी तक हम ग्रामीण क्षेत्रों के शिक्षित बेरोजगारों को रोजगार उपलब्ध कराने में पूरी तरह सक्षम नहीं हो पाये हैं। इसके लिये हमें अपने देश के युवकों की मानसिकता भी बदलनी होगी कि वे केवल शहरों में मिलने वाली नौकरियों की ही ओर आशा न टिकायें रखें बल्कि अपना काम धंधा खुद शुरू करके अपने पैरों पर खड़े होने का यास करें। सरकार ने उनके लाभ के लिए जो कई कार्यक्रम और योजनाएं शुरू की हैं उनका वे पूरा-पूरा लाभ उठाएं। इस क्षेत्र में स्वयंसेवी संगठनों को भी पर्याप्त भूमिका निभानी चाहिये क्योंकि यह महान लक्ष्य अकेले सरकार ही पूरा नहीं कर सकती, इसमें सभी का प्रयास अपेक्षित है।

103-एच, सेक्टर-4,
डी. आई. जेड एरिया
नई दिल्ली - 110001

गांवों में बढ़ती बेरोजगारी

✍ भुवनेश्वर द्विवेदी

जहां तक रोजगार और बेरोजगारी का प्रश्न है, वह अर्थशास्त्र के आपूर्ति और मांग के सिद्धांत से जुड़ा हुआ है। समर्थ और काम करने के इच्छुक व्यक्तियों की संख्या अधिक हो और काम के अवसर और सुविधाएं कम हों तो बेरोजगारी अर्थात् रोजगार की कमी की समस्या उठती है। इसके विपरीत यदि समर्थ और काम करने के इच्छुक व्यक्तियों की संख्या कम हो और काम के अवसर तथा सुविधाएं अधिक हों तो काम करने वालों के अभाव की समस्या होती है। इसलिए ऐसा होता है कि जहां रोजगार के अवसर कम होते हैं वहां से बेरोजगार लोग रोजगार की तलाश में उन स्थानों की ओर जाने लगते हैं जहां काम के अवसर अधिक होते हैं। पाश्चात्य देशों में औद्योगिक क्रांति के बाद रोजगार के काफी अवसर निकल आये। पर उन देशों की आबादी कम थी। इसलिए वहां बाहर के लोग रोजगार की खोज में पहुंचने लगे और आज भी पहुंच रहे हैं।

आज बेरोजगारी ने हमारे देश में और विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में विकराल रूप धारण कर लिया है। पूरे भारत में बेरोजगारी का एक ही तरह का दबाव और रूप हो, ऐसी बात नहीं है। शहरी क्षेत्रों में बेरोजगारी का कोई और रूप है तथा ग्रामीण क्षेत्रों में कोई और रूप। बेरोजगार लोगों के भी दो वर्ग हैं। एक वर्ग तो शिक्षित बेरोजगारों का है, दूसरा अशिक्षित बेरोजगारों का। शहरों, विशेषकर बड़े-बड़े नगरों की अपेक्षा गांवों में रोजगार के कम अवसर होते हैं। ऐसा इसलिए कि गांवों में रोजगार का मुख्य स्रोत कृषि है जबकि नगरीय क्षेत्रों में तरह-तरह की नौकरियां तो हैं ही, छोटे-मोटे व्यवसाय के लिए साधन और सुविधाएं भी उपलब्ध हैं।

भारत मूलतः कृषि प्रधान देश है। खाद्यान्नों के उत्पादन के लिए तो कृषि का महत्व है ही, साथ ही यह लघु उद्योग, कुटीर उद्योग और दस्तकारी इत्यादि के लिए कच्चे माल पैदा करती है। कई बड़े-बड़े उद्योग भी कृषि पर आधारित हैं जैसे कि चीनी उद्योग, वस्त्र उद्योग इत्यादि। गांवों में बेरोजगारी की बात करते समय एक धारणा यह भी होती है कि गांवों में रोजगार की गुंजायश कम होती है, पर बात ऐसी है नहीं। गांव में रोजगार के अनेक साधन हैं। आवश्यकता उनको केवल पहचानने और उनका भरपूर दोहन करने की है। हाल ही में राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिंह राव ने ठीक ही कहा है कि देश में दो तिहाई रोजगार कृषि क्षेत्र में हैं। कृषि क्षेत्र की इस क्षमता को ही देखते हुए कृषि में पूंजी निवेश बढ़ाना अत्यंत आवश्यक है। कृषि में पूंजीनिवेश की राशि इधर घटती रही है जबकि 1980-81 में कृषि के क्षेत्र में पूंजी निवेश की दर 19 प्रतिशत थी वह घट कर अब केवल 11 प्रतिशत रह गयी है। अब आठवीं योजना में कृषि क्षेत्र में पूंजी निवेश की दर 18.45 प्रतिशत करने का लक्ष्य है।

भारत सरकार गांवों में बेरोजगारी पर काबू करने का प्रयास करती रही है पर निर्धारित लक्ष्यांक प्राप्त नहीं हो सका है। 1992-93 से 90 लाख रोजगार पैदा करने का लक्ष्य था किंतु 60 लाख रोजगार ही पैदा किये जा सके। यह जो 30 लाख की कमी रह गयी है उसे चालू वर्ष में पूरा करने का प्रयास किया जायेगा।

प्रधानमंत्री ने हाल ही में अशिक्षित और शिक्षित बेरोजगारों के लिए दो कार्यक्रमों की घोषणा की है। ये कार्यक्रम इस वर्ष 2 अक्तूबर से लागू किए गए हैं। एक कार्यक्रम तो है कि देश के चुने हुए 1752 प्रखंडों में 100 दिन के लिए अशिक्षित बेरोजगारों को न्यूनतम मजूदरी का रोजगार मुहैया कराना और दूसरा, आठवीं योजना के शेष तीन वर्षों की अवधि में छोटे धंधों की सात लाख इकाइयों की स्थापना।

ऊपर जिन कार्यक्रमों की चर्चा की गयी है वे निश्चय ही ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी का दबाव कम करने में सहायक होंगे। पर सच पूछे तो यह ऊंट के मुंह में जीरे की ही तरह हैं। आज वास्तविकता यह है कि गांवों में बेरोजगारी बड़ी तेजी से बढ़ रही है। कहने की जरूरत नहीं कि भारत गांवों में बसता है, दिल्ली बंबई में नहीं। भारत की लगभग तीन चौथाई आबादी गांवों में रहती है। पहले तो एक चौथाई आबादी शहरों में रहती

थी पर नक्शा कुछ बदल रहा है। शहरों की आबादी बढ़ रही है और गांवों की आबादी घट रही है। यह तो किसी से छिपा नहीं कि गांवों में रोजगार के अवसर और साधनों का अभाव है। यह अभाव ही गांव के लोगों को शहरों की ओर भगा रहा है।

गांवों में बेरोजगारी के कारण और निवारण के उपाय पर विचार करने से पूर्व यह जान लेना आवश्यक है कि गांवों में दो तरह के बेरोजगार हैं - अशिक्षित बेरोजगार और शिक्षित बेरोजगार। इन दोनों तरह के बेरोजगारों के लिए रोजगार के रूप में स्वभावतः ही भिन्नता होगी। तात्पर्य यह कि रोजगार के उपाय ऐसे ही होने चाहिए जिनसे दोनों तरह के बेरोजगारों का निर्वाह हो सके।

गांवों में बेरोजगारी बढ़ने के निम्नलिखित कारण गिनाये जा सकते हैं: कृषि में स्थायी कार्य का अभाव, तकनीकी शिक्षा की कमी, लघु और कुटीर उद्योगों का अभाव, शारीरिक श्रम वाले कार्य के प्रति अरुचि, हस्तशिल्प की ह्रासोन्मुखता, मनोरंजन के साधनों का अभाव, समय के परिवर्तन के साथ जन्मती नई-नई आशाएं और आकांक्षाएं इत्यादि। गांवों में बेरोजगारी के ये सब कारण तो हैं ही, एक कारण यह भी है कि हर कोई, चाहे वह अशिक्षित हो या शिक्षित, सरकारी नौकरी चाहता है। सरकारी नौकरी की यह चाह न केवल राज्य स्तर पर बल्कि राष्ट्र स्तर पर भी, अनेकानेक नैतिक बीमारियों को जन्म दे रही है। सरकारी नौकरी की यह भूख आखिर किस लिए? इसलिए कि सरकारी नौकरी में स्थायित्व है, पेंशन है, इत्यादि। पर यह सब उतना महत्वपूर्ण नहीं जितना महत्वपूर्ण यह कि यदि आप येन केन प्रकारेण सरकारी नौकरी में घुस गये तो पैसे के लिए कमजोरी को छोड़कर आप में लाख दोष क्यों न हों ऐसी कोई ताकत नहीं जो आपको आसानी से नौकरी से निकाल सके।

इस बात की चर्चा की जा चुकी है कि खेती के काम बराबर नहीं चलते। साल का लगभग एक तिहाई भाग बेकार बैठे बीतता है। इसके साथ ही खेती से संबंधित कुछ और कारण हैं। एक तो यह कि खेती का वह पुराना रूप नहीं रहा जब बैलों के सहारे ही खेती होती थी। अब तो जुताई बुवाई इत्यादि के लिए ट्रैक्टर चल निकले हैं। बैलों से जितने खेतों की जुताई बुवाई इत्यादि जो दिनों में की जा सकती थी वह अब ट्रैक्टर से घंटों में ही की जा सकती है। इसका परिणाम यह हुआ है कि खेती में पहले जितने लोगों को जरूरत पड़ती थी अब उतने लोगों की जरूरत नहीं रही। कारण चाहे जो भी हो, खेती अब बिना रासायनिक खाद, सिंचाई की पर्याप्त सुविधा, उच्च कोटि के उन्नत बीज के बिना सफलतापूर्वक नहीं की जा सकती। रासायनिक खाद अब इसलिए आवश्यक हो गयी है कि खेतों को समय-समय पर किसी न किसी रूप में जो प्राकृतिक खाद मिल जाती थी वह अब नहीं मिल पाती। दूसरे यह कि खेतों में कीड़े पड़ जाते हैं। नदियों की जिस बाढ़ को हम अभिशाप मानते थे वह वरदान भी हुआ करती थी और वरदान भी दुहरा। एक तो यह कि नदियों की बाढ़ के साथ जो सड़ी गली घासफूस से सनी मिट्टी आती थी वह नदियों में पट कर बाद में ताजा और बढ़िया खाद हो जाती थी। दूसरे खेत में जो कीड़े मकोड़े होते थे वे बाढ़ के पानी के साथ निकल कर चले जाते थे। किसी न किसी रूप में प्राकृतिक खाद खेतों को मिलती रहती थी। उसके अलावा, खेती का काम गाय बैल पर आधारित होने के कारण गोबर की खाद सदा उपलब्ध रहती थी।

खेती के संबंध में कुछ और भी बातें हैं। हर गांव में ऐसे लोग बहुत कम ही हैं जिनके पास पूरे परिवार का खर्च निभाने लायक खेत हों। अधिकांश लोगों के पास खेत छोटे होते हैं। इन लोगों को परिवार का खर्च पूरा करने के लिए खेती के अलावा कुछ और भी धंधा करना पड़ता है या उनके परिवार का कोई सदस्य बाहर से कमा कर पैसे भेजता है। काफी लोग ऐसे हैं जिनके पास कहने के लिए खेत हैं पर वे अधिक खेत वालों से बटाई पर खेत लेकर खेती करते हैं। जो अत्यंत गरीब हैं और जिन्हें खेती करने के लिए कोई खेत नहीं मिलता है वे खेतिहर मजदूर हो जाते हैं।

बेरोजगारी की समस्या हल करने के लिए यह आवश्यक है कि जो भी खेत हैं उनसे अधिक से अधिक लाभ उठाया जाए। खेती मुख्य रूप से खाद्यान्नों की ही की जाती है। नकदी खेती का कोई खास चलन नहीं है। देश के कुछ राज्यों में नकदी खेती अवश्य की जाती है। नकदी फसलों की खेती भी ग्रामीण बेरोजगारी को दूर करने में सहायक हो सकती है। साग-सब्जी की भी खेती नकदी ही है। साग-सब्जी की खेती की विशेषता यह है कि यह बारहो मास की जा सकती है। हां, इसके लिए सिंचाई की स्थायी और निश्चित व्यवस्था होनी चाहिए।

जमीन का उपयोग बाग बगीचे के रूप में भी किया जा सकता है। रोजगार के रूप में मौसम के अनुसार आम, जामुन, अमरूद, बेर, केला, आंवला, कटहल, महुआ इत्यादि के पेड़ों का लाभ

बहुत पहले से उठाया जाता रहा है। गांवों के साथ एक दुखद स्थिति यह है कि पहले के जो बगीचे थे उनके पेड़ पुराने पड़ जाने के कारण खत्म होते जा रहे हैं। जो पेड़ बच रहे हैं वे बड़ी तेज़ी से कटते जा रहे हैं। यह इसलिए कि जलावन का अभाव होने के कारण पेड़ों को काटकर उनकी लकड़ी जलावन के इस्तेमाल के लिए बेची जा रही है। इधर लकड़ी की कीमत बहुत बढ़ भी गयी है। इसलिए लोग तत्काल लाभ के लालच में पेड़ बेच दिया करते हैं। पुराने पेड़ों के कट जाने पर नये पेड़ लगाने का उत्साह लोगों में नहीं दिखता। वृक्षारोपण का कार्यक्रम काफी दिनों से चल रहा है। यह एक ऐसी योजना है जिसमें वृक्षारोपण की ओर लोगों को आकृष्ट करने के लिए विशेष रूप से प्रोत्साहन तो दिया ही जाना चाहिए, साथ ही अपेक्षित सुविधाएं भी उपलब्ध करायी ज़ानी चाहिए। वैसे वृक्ष तो सभी प्रकार के लगाये जाने चाहिए किंतु उद्यान कृषि के रूप में ऐसे वृक्ष लगाये जाएं जो फल देने वाले हों। गांवों में अमरूद, बेर, श्रीफल, शरीफा, पपीता, नींबू इत्यादि के पेड़ होते तो हैं पर जहां तक बेरोजगारी की समस्या हल करने की बात है ऐसे फल वाले पेड़ों को अधिकाधिक संख्या में लगाना चाहिए। ऐसे पेड़ यदि व्यावसायिक स्तर पर लगाये जायें तो वे जीवकोपार्जन के अच्छे साधन हो सकते हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध साधनों के आधार पर किये जा सकने वाले कई ऐसे कुटीर उद्योग हैं जिनका सहारा लिया जा सकता है जैसे कि पशुपालन, रेशम उत्पादन, मत्स्य पालन, मधुमक्खी पालन, हथकरघा इत्यादि।

देश में सड़कों का अब जाल सा बिछ गया है। आवागमन की सुविधा बेहद बढ़ गयी है। गांव अब एक दूसरे से अलग-थलग नहीं रह गये हैं। मोटर, बस, ट्रक, टैम्पू, मिनीबस, तिपहिया, मोटर साइकिल, स्कूटर इत्यादि वाहनों की भी संख्या अब गांवों में इतनी अधिक हो गयी है कि सड़कों के किनारे इन वाहनों की मरम्मत इत्यादि के लिए छोटी-छोटी कर्मशालाएं खुलने लग गयी हैं। गांवों में भी रेडियो, टेलीविजन इत्यादि मनोरंजन के साधन रखे जाने लगे हैं। इन सबकी मरम्मत की भी आवश्यकता होती ही है। इसलिए इन चीजों की मरम्मत इत्यादि से सम्बन्धित तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था की जाए तो रोजगार की गुंजाइश हो सकती है।

भारत कृषि प्रधान देश रहा है, पर जमाना बदल रहा है। जब हमने पाश्चात्य ढंग की शिक्षा पायी और उसके साथ पाश्चात्य जीवन पद्धति की बहुत सारी विशेषताएं अपनायीं तो उनके साथ जुड़ी अन्य कई बातें तो यहां आनी ही थीं। उद्योग भी उन्हीं में से एक हैं। यह युग उद्योग का है। कृषि की प्रधानता उद्योग द्वारा छिनती जा रही है। ऐसी स्थिति में गांवों में भी उद्योग की व्यवस्था होनी ही चाहिए। बड़े उद्योग तो अपने लाभ लक्ष्य के कारण गांवों में किये नहीं जा सकते और किये भी नहीं जाने चाहिए। गांवों में लघु उद्योग, विशेषकर कुटीर, शिल्प और हस्तशिल्प से संबंधित कच्चे माल की कमी नहीं है। गांवों में बढ़ती जा रही बेरोजगारी को दूर करने के लिए लघु उद्योगों की स्थापना आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य हो गयी है।

बेरोजगारी की समस्या के समाधान के ही उद्देश्य से शिक्षित युवकों को स्वरोजगार कायम करने के लिए सरकार की ओर से अपेक्षित सुविधाएं दी जाने लगी हैं। इस सिलसिले में एक अप्रिय बात यह है कि स्वरोजगार में हाथ लगाने का साहस कम ही युवक करते हैं। यह तो सत्य है कि स्वावलंबन की जैसी प्रवृति होनी चाहिए उससे देश के अधिकांश भागों के निवासी वंचित से रहे हैं। स्वाधीनता के बाद सामुदायिक विकास के नाम पर बाहर से जो सहायता राशि मिलने लगी उससे एक ऐसी हवा बही कि हम हर छोटी-बड़ी बात के लिए सरकार की सहायता खोजने लगे। जिस सामुदायिक विकास योजना को विकास का साधन बनाया गया था उसने देश के कुछ इने गिने राज्यों को छोड़कर अधिकांश राज्यों और लोगों को अनुत्तरदायी और परावलंबी बना दिया। सरकार द्वारा प्रदत्त स्वरोजगार की सुविधाओं का अपेक्षित लाभ नहीं उठाया जाना स्वावलंबन की प्रवृत्ति के अभाव का ही द्योतक है।

बेरोजगारी के कारणों में एक कारण के रूप में युवकों में शारीरिक श्रम के प्रति अरुचि भी गिनायी गयी है। यह दुर्भाग्य की बात है कि जातिभेद की हमारी भावना ने हममें कर्मभेद का भी भाव भर दिया है। जाति की तरह अमुक कार्य बड़ा है और अमुक कार्य छोटा, यह धारणा हमारे दिल में जैसे घर कर गयी हो। "कर्म पूजा है" हम कहते तो हैं पर यह बात कथनी तक ही रहती है, करनी में नहीं उतरती। सरकारी नौकरियों के लिए आज जो भाग दौड़ मची हुई है उसमें शारीरिक श्रम के प्रति अरुचि भी एक कारण है। हम सफेदपोश छाप चाहते हैं कुर्सी पर बैठे बैठे। शारीरिक श्रम के प्रति रुचि है या अरुचि यह बात व्यक्ति के शारीरिक गठन से ही लक्षित हो जाती है। आज के युवक भूल जाते हैं कि शारीरिक श्रम में एक अद्भुत शक्ति होती है। यह शक्ति हमारे अंदर आत्मविश्वास की लौ पैदा कर देती है। हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी शारीरिक श्रम को कितना

अधिक महत्व देते थे, यह उनके इस कथन से ही प्रकट हो जाता है: **"वे हाथ भी क्या कोई हाथ हैं जिनमें कभी छाले नहीं पड़े।"** दुर्भाग्य की बात तो यह है कि जैसे जातिभेद की भावना हमारे दिमाग से नहीं हटती वैसे ही कर्मभेद की भी भावना नहीं हट रही।

बात ऐसी भी नहीं कि गांवों में रोजगार के अवसरों का अत्यंत अभाव हो। पर वे अवसर युवकों को अधिक समय तक अपने से बांधे नहीं रखते। इसका एक कारण गांवों में मनोरंजन के साधनों का अभाव है। एक समय था जब गांवों में समय-समय पर कोई कथावाचक आकर रामायण या महाभारत की कथा कहा करते थे। इन कथाओं में धर्म के तत्व तो रहते ही थे पर अधिक मुखर थी वर्णनशैली की रोचकता और बीच-बीच में कर्णमधुर भजन। दिन भर के थके मांदे गृहस्थ का मन भी संध्या समय किसी तरह के मनोरंजन के अभाव में अनमना हो उठता है। जो क्या चाहता है, यह स्पष्ट प्रकट नहीं होता। किंतु वह कुछ चाहता है यह बात भी छिपी नहीं रहती। ऐसे में कहीं दूर से ही सही, किसी रसिया के रसीले कंठ से निकला कोई सरल गीत सुनकर गृहस्थ का मन चौंककर चहक उठता है। लगता है खोयी हुई बड़ी मनचाही चीज सहसा मिल गयी हो। पर ऐसा होता तो कभी ही कभी है। लेकिन आजकल टी. वी. ने इन सब को पीछे छोड़ दिया है। तात्पर्य यह कि गांवों में मनोरंजन के साधन होने चाहिए।

इसी तरह एक और कारण है जिससे गांव के नौजवान गांव में रहकर कोई छोटा मोटा काम करना नहीं चाहते। यह कोई छिपाने की बात नहीं कि पाश्चात्य विचारधारा से प्रभावित होकर हमारा जीवनदर्शन बिल्कुल बदल गया है। हमारे जीवन का मूल तत्व था सादा जीवन—उच्च विचार। अब बात उल्टी हो गयी है। भोगविलास की असंख्य नयी-नयी चीजें नित बाजार में आ रही हैं। आवागमन की सुविधाओं के बढ़ जाने से ग्रामीण क्षेत्रों के लोग शहरी लोगों के रहन-सहन से पूरी तरह परिचित हो गये हैं। यह तो स्पष्ट है कि ग्रामीण जीवन और शहरी जीवन में आसमान जमीन का फर्क है। बाहय रूप से तो भड़क वाली जीवन पद्धति आंखों और मन को तुरंत आकृष्ट कर लेती है। फलतः गांवों की नयी पीढ़ी भी चाहती है कि शहरियों की तरह का जीवन बितायें।

ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अभाव का ही परिणाम है कि भरपेट भोजन न मिलने के कारण कुछ ग्रामीण क्षेत्रों के पूरे के पूरे परिवार रोजी रोटी की तलाश में नगरों में चले आते हैं। ऐसे बहुत से परिवार विशेषकर महानगरों में चले आये हैं और आज भी आ रहे हैं। गांवों की बेरोजगारी केवल बेरोजगार लोगों की ही समस्या नहीं है। यह गांव के समस्त निवासियों के लिए भी है और नगरवासियों के लिए भी। कामधाम नहीं रहने के कारण गांवों के अनपढ़ से लेकर अच्छी शिक्षा प्राप्त युवक आज जो राह अपना रहे हैं वह समाज के लिए शुभ तो नहीं है। बस आवारागर्दी और नशीले पदार्थों का सेवन ही उनका धंधा बन गया है। नगरनिवासियों के लिए भी यह समस्या एक बड़ा सिरदर्द बनने जा रही है। महानगरों में रोजी रोटी की कमी नहीं है। काफी पढ़ालिखा हो या थोड़ा पढ़ा लिखा हो या बिल्कुल अनपढ़, अगर उसमें काम करने की लगन है तो वह महानगरों में भूखा नहीं रहेगा।

यह बात केवल तात्कालिक चिंता का ही कारण नहीं। यह एक भावी संकट का भी कारण होगी। महानगरीय क्षेत्रों में या अन्य नगरों में, इतने बेरोजगारों की भीड़ आ जाने से अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न होंगी, हो भी रही हैं। इतने लोगों के लिए आवास और अन्य सुविधाओं की उचित व्यवस्था संभव हो सकेगी, ऐसा दिखता नहीं। फलतः पर्यावरण तो दूषित होगा ही, अनेक प्रकार की बीमारियां भी फूट पड़ेगी।

इसमें तो कोई शक नहीं कि बाहर से आये बेरोजगारों को कोई न कोई काम धंधा मिल ही जायेगा और उनकी भूख मिट जायेगी पर भूख मिटेगी पेट की और पेट की भूख ज्यों त्यों मिटती जायेगी त्यों त्यों उनमें एक नयी भूख जन्म लेने लगेगी। और वह भूख होगी मन की।

ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी को लेकर जो चिंता हमें सता रही है वह भावी संभावनाओं से कम ही भयावह है। यह मन की भूख जब कर्कट रोग कैंसर की तरह बढ़ने लगेगी तो स्थिति क्या होगी, अभी कहा नहीं जा सकता। शहरों और नगरों में साधन सम्पन्न लोगों का सब प्रकार से सुखद जीवन देखकर ग्रामीण क्षेत्रों से आए लोगों का मन ललचेगा ही। औरों की तरह का जीवन जाने के लिए अपेक्षित साधन प्राप्त करने के अच्छे बुरे हर तरह के प्रयास तो करने ही होंगे। अपराध की प्रवृत्ति जन्म लेगी और वह बढ़ते-बढ़ते एक ऐसा रूप लेगी कि नगरनिवासियों का जीवन निरापद नहीं रह पायेगा। कल जो स्थिति होने वाली है वह अपने अत्यंत लघु रूप में आज भी आपके हमारे सामने विद्यमान है। एक नया अपराधी वर्ग जो पैदा होगा उसे हम दूसरों

(शेष पृष्ठ 38 पर)

बेरोजगारी समाधान के लिए मानसिकता में बदलाव जरूरी

✍ सुरेन्द्र

आज देश की प्रमुख समस्याओं में बेरोजगारी एक ज्वलंत समस्या है। बेरोजगारी यानि रोजगार का न होना। रोजगार कार्यालय हो या सेना में भर्ती का दफ्तर या फिर सरकारी, अर्द्धसरकारी अथवा गैर सरकारी कार्यालय/संस्था/प्रतिष्ठान जहां नियुक्ति के लिए रिक्तियां घोषित की गयी हों अथवा विज्ञापन दिया गया हो, ऐसे स्थानों तक पहुंचने वाली सड़कों/रास्तों या गलियों की ओर नजर दौड़ाएं तो चींटी की तरह पंक्तिबद्ध रोजगार पाने वालों का हुजूम रोजगार कार्यालय की ओर बढ़ता नजर आयेगा। इतना ही नहीं बेरोजगार युवकों अथवा युवतियों की बेकरार तथा परेशान भीड़ रोजगार के लिए सूचना देने वाले अखबारों के स्टाल से लेकर फुटपाथ पर नियुक्ति संबंधी आवेदन पत्र बेचने वालों के इर्दगिर्द चक्कर काटती आसानी से देखी जा सकती हैं। किसी भी प्रकार के संस्थान के लिए रिक्तियों की तुलना में हजारों गुना अधिक आवेदनों का पहुंचना, रिक्ति के लिए निर्धारित योग्यता से अधिक योग्यता वाले आवेदकों की अधिकता, साधारण-सी नौकरी या छोटे रोजगार के लिए इलाके से हजारों मील दूर एक राज्य से दूसरे राज्य की दौड़ लगाना बेरोजगारों की नियति बन चुकी है। समस्या इतनी गंभीर हो चुकी है कि इसका लाभ उठाकर बेरोजगारों का शोषण एक धंधा बनता जा रहा है। नौकरी का प्रलोभन देकर बेरोजगारों से हजारों रुपये ऐंठने से लेकर अन्य कई तरह के शोषण के मामले आए दिनों अखबारों की सुर्खियों में नजर आते हैं।

बेरोजगारी के कारण गांवों से शहर की ओर पलायन लगातार जारी है। नगर इस पलायन के कारण महानगर की शक्ल अख्तियार करते जा रहे हैं। शहर में आने वाले कम पढ़े लिखे या मजदूर नगरों या महानगरों की फुटपाथ अथवा झुग्गी झोपड़ी में जिल्लत की जिन्दगी जीने को विवश हो जाते हैं और अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कई गलत काम करते हैं और अनजाने में ही वे अपराधी बन जाते हैं।

इस गंभीर समस्या के समाधान के लिए आजादी के बाद से सरकारी स्तर पर काफी चिंता जतायी गयी। अनेक योजनाएं चलायी गयीं। फिर भी समस्या का कारगर समाधान नहीं हो पाया। दिनोंदिन समस्या बद से बदतर होती चली जा रही है। बेरोजगारी को बढ़ावा देने में जनसंख्या विस्फोट को नकारा नहीं जा सकता है। देश की आबादी जिस रफ्तार से बढ़ती चली जा रही है, सीमित संसाधन धीरे-धीरे जीवन-यापन के लिए तंग पड़ते जा रहे हैं। संसाधनों के अतिरिक्त विकास के बावजूद लगातार प्रति व्यक्ति के उपयोग के लिए संसाधनों की कमी होती चली जा रही है। ऐसा बढ़ती आबादी के कारण हो रहा है। इससे रोजगार के अवसर भी उत्तरोत्तर कठिन से कठिनतर होते जा रहे है और उनके लिए संघर्ष कड़ा होता जा रहा है।

बेरोजगारों की फौज बनाने में शिक्षा का गिरता स्तर भी काफी हद तक जिम्मेदार है। शिक्षण संस्थानों में बढ़ती कुव्यवस्था, परीक्षा में बढ़ता कदाचार, शिक्षण का गिरता स्तर, कालेजों स्कूलों की दयनीय स्थिति इत्यादि के कारण शैक्षणिक वातावरण प्रदूषित हो गया है। इनमें दिनोंदिन योग्यता का अभाव तथा अनुशासन हीनता, स्वेच्छाचारिता इत्यादि बढ़ती जा रही है जिससे योग्यता के आधार पर रोजगार प्राप्त करना असंभव सा होता जा रहा है।

बेरोजगारी की समस्या के मूल में एक सब से अहम बात दिखती है—एक पंगु मानसिकता। धीरे-धीरे लोगों की मानसिकता में बदलाव के कारण रोजगार शब्द का अर्थ संकुचित हो गया है। रोजगार अर्थ जीविका या उद्यम या व्यवसाय है। इन साधनों का अभाव बेरोजगारी हो सकता है। लेकिन आज के युग का अर्थ सिमट कर नौकरी (खासकर सरकारी या अर्द्धसरकारी) रह गया है। इस मानसिकता से ग्रसित अभिभावक बच्चों की रुचियों या प्रवृत्तियों को ध्यान में न रखते हठपूर्वक उन्हें मात्र नौकरी पाने वाली शिक्षा की ओर जबरदस्ती भेज देते हैं। इस स्थिति में बच्चों के मन में उत्पन्न कुंठा और निराशा से पढ़ाई एक बोझ बन जाती है। इससे उनके मानसिक विकास का ह्रास होता है। कई विद्यार्थी ऐसे होते है जिनमें व्यापार, उद्योग, कला, संगीत, खेल आदि क्षेत्रों में आगे बढ़ने की पर्याप्त प्रतिभा होती है लेकिन

हममें से अधिकांश लोग इसे नजरअंदाज कर उन्हें नौकरी के लिए प्रेरित करते हैं। इससे भी बेरोजगारी को बढ़ावा मिलता है। दोषपूर्ण शिक्षा के कारण आजकल पढ़े लिखे लोगों में चिंतन और विवेक शक्ति का ह्रास हो रहा है। ऐसे नवयुवकों में श्रम से दूर रहना, श्रम को उचित सम्मान न देना, परंपरागत व्यवसाय या रोजगार को हीन-भाव से देखना जैसी प्रवृत्तियां घर कर गयी हैं। साथ ही नौकरी को आसानी से आमदनी का जरिया, आराम का साधन तथा इच्छित फल देने वाला कल्पतरू मान लिया गया है। इन प्रवृत्तियों का असर ग्रामीण रोजगारों तथा परंपरागत व्यवसाय पर पड़ा है। गांवों में कृषि के लिए सुलभ पर्याप्त भूमि वाले परिवार के नौजवान भी पढ़ लिखकर और बेहतर तरीके से कृषि करने के बजाय महज नौकरी पाने के लिए इच्छुक हो जाते हैं, भले ही उन्हें नौकरी के बाद भी जीवन की अनेक जरूरतों को पूरा करने के लिए गांव की कृषि आय पर निर्भर क्यों न रहना पड़े।

प्राचीन समय से ही हमारे गांव में आम जरूरत की छोटी-छोटी चीजों का उत्पादन, ग्रामीण स्तर पर छोटे-छोटे व्यवसाय, कुटीर उद्योग संस्थाओं के द्वारा होता रहा है। लेकिन कालान्तर में ऐसे समुदाय या वर्ग के लोगों के घरों के नौजवान भी इन परंपरागत व्यवसाय को रोजगार न मान कर नौकरी की खोज में खाक छानते नजर आते हैं। ग्रामीण क्षेत्र की महिलाएं भी शहरों की ओर इस मानसिकता से पलायन करने लगी हैं। इनका असर ग्रामीण समाज की पारिवारिक संरचना से लेकर आर्थिक प्रगति पर भी पड़ा है लेकिन आजकल के युवक श्रम से परहेज करते हैं और आराम की जिन्दगी बिताना चाहते हैं। इसी कारण वे नौकरी के पीछे दौड़ते हैं।

इसलिए बेरोजगारी के समाधान के लिए नौकरी की मानसिकता को बदलना जरूरी है। इसके बिना इस समस्या का समाधान सीमित संसाधनों में मुश्किल से ही नहीं असंभव हो सकता है। शिक्षा का उद्देश्य मात्र नौकरी खासकर सरकारी पाना नहीं, बल्कि व्यक्ति के जीवन में बुद्धि विवेक का विकास करना है ताकि जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में वह अधिक कुशलता, क्षमता तथा सफलता के साथ कार्य कर सके।

सरकारी स्तर से भी ऐसे ठोस प्रयास की आवश्यकता है कि छात्रों, नौजवानों को मात्र नौकरी की मानसिकता से उबारकर स्वरोजगार की ओर प्रवृत्त होने में अधिक से अधिक सहयोग, संरक्षण एवं संतोष मिले। कृषि क्षेत्र में स्वरोजगार की असीम संभावना है। इसलिए कृषि के विकास के लिए आवश्यक संसाधनों का विकास सरकारी स्तर पर प्राथमिकता के आधार पर करना होगा। इससे कृषि का व्यवसाय छोड़कर नौकरी की ओर भागने वाले नौजवानों की संख्या घटेगी, साथ ही गांव-गांव में खुशहाली तथा आत्मनिर्भरता आयेगी। कृषि के क्षेत्र में सिंचाई की पुख्ता व्यवस्था, आधुनिक तकनीक की जानकारी, कृषि के क्षेत्र में किये गये आविष्कारों एवं मशीनों को सहजता से सुलभ कराकर सरकार बेरोजगारी दूर करने के साथ-साथ देश की प्रगति को काफी आगे बढ़ा सकती है। इसी प्रकार परंपरागत व्यवसाय के गिरते स्तर को सुधारना इनके संरक्षण की पर्याप्त व्यवस्था करना, लोककला, लोक संगीत से जुड़े लोगों को सहायता देना, कुटीर उद्योग तथा छोटे-छोटे घरेलू धंधों को बढ़ावा देकर भी स्वरोजगार को बढ़ाया जा सकता है तथा बेरोजगारी की समस्या पर नियंत्रण पाया जा सकता है और नौकरी की पंगु मानसिकता को बढ़ने से रोका जा सकता है। स्वरोजगार की दिशा में सार्थक प्रयास करने वाले नौजवानों तथा अभिभवाकों को सम्मानित और पुरस्कृत करना होगा ताकि उसका असर समाज के बेरोजगारों पर पड़े और समस्या के हल में सहयोग मिले।

सामाजिक, पारिवारिक, सरकारी एवं राजनैतिक सभी स्तरों पर ऐसे प्रयास की आवश्यकता है जिससे रोजगार के लिए मात्र नौकरी की मानसिकता छोड़कर अन्य व्यवसायों में लगे व्यक्तियों का मनोबल बढ़े। उनकी प्रतिष्ठा तथा सम्मान किसी भी तरह नौकरी करने वालों से कम न हो। ऐसा करने से बेरोजगारों को नौकरी के अलावा अन्य क्षेत्रों में जाने की प्रेरणा मिलेगी, उनका मनोबल बढ़ेगा तथा बेरोजगारी जैसी विकराल समस्या का एक कारगर समाधान भी होगा।

जुही निकेतन (साढ़),
पटना

लघु एवं कुटीर उद्योग : भारतीय अर्थव्यवस्था की कुंजी

डा० मुन्नीलाल

किसी भी देश की अर्थव्यवस्था में लघु एवं कुटीर उद्योगों का विशेष महत्व होता है। भारत जैसे विकासशील देश में तो इनका महत्व और भी ज्यादा है। महात्मा गांधी जी का यह कथन उचित ही है कि "भारत का मोक्ष उसके कुटीर उद्योग धन्धों में निहित है।" भारत गांवों का देश है। यहां की तीन-चौथाई से भी अधिक आबादी गांवों में बसती है। आबादी का 70 प्रतिशत भाग कृषि पर निर्भर है और कृषि मानसून पर, जो कि निश्चित नहीं है। अतः गांवों में बेरोजगारी बहुत ज्यादा है। बेरोजगारी की समस्या ने आज बहुत विकराल रूप धारण कर लिया है। दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त में बेरोजगारों की संख्या 90 लाख थी जो तीसरी योजना के अन्त में बढ़कर 95 लाख हो गयी। सातवीं पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में बेरोजगारों की संख्या 2.66 करोड़ थी। 1991 में पंजीकृत बेरोजगारों की संख्या 3 करोड़ 60 लाख थी। इसके अतिरिक्त देश में अदृश्य बेरोजगारी भी है। अनुमानतः कृषि क्षेत्र में लगी जनसंख्या का लगभग 25 प्रतिशत भाग अदृश्य रूप से बेकार है। बेकार जनसंख्या देश का उत्पादन बढ़ाने में तो सहायक नहीं होती, अपितु वे उत्पादित वस्तुओं का उपभोग ही करते हैं।

बेरोजगारी के चलते ग्रामीण क्षेत्रों से लोग बड़ी संख्या में शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं, लेकिन शहरों में भी सबके लिए रोजगार के साधन उपलब्ध नहीं हो सकते। यही कारण है कि बेरोजगारी की समस्या आज अधिक गम्भीर हो गयी है। निःसन्देह भारत जैसी विकासशील अर्थव्यवस्था में जहां पूंजी का अभाव है और बेरोजगारी का साम्राज्य है वहां लघु एवं कुटीर उद्योग आर्थिक और सामाजिक सभी पहलुओं से औद्योगिक विकास की आधारशिला हैं। इतना ही नहीं लघु एवं कुटीर उद्योगों में वर्तमान की ज्वलन्त समस्याओं का समाधान निहित है। भारतीय योजना आयोग का यह कथन सत्य है कि, "कुटीर एवं लघु उद्योग हमारी अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण अंग हैं जिनकी कभी भी उपेक्षा नहीं की जा सकती।"

तालिका 1 से स्पष्ट है कि पहली पंचवर्षीय योजना में लघु एवं कुटीर उद्योगों पर कुल व्यय 42 करोड़ रुपये का रहा जबकि दूसरी योजना में 187 करोड़, तीसरी योजना में 249 करोड़, वार्षिक योजनाओं में 126 करोड़, चौथी योजना में 243 करोड़, पांचवीं योजना में 592 करोड़, छठी योजना में 1980 करोड़ एवं सातवीं योजना में 2753 करोड़ रुपये का कुल व्यय किया गया। इतना ही नहीं इन उद्योगों के विकास हेतु सरकार ने और भी कई कदम उठाये, जो वास्तव में प्रशंसनीय हैं।

तालिका - 1

लघु एवं कुटीर उद्योग का विकास

वर्ष	इकाइयों की संख्या	रोजगार मिलियन	उत्पादन चालू कीमतों पर (करोड़ रुपये)	निर्यात करोड़ रुपये में	निर्यात उत्पादन के प्रतिशत के रूप में
1	2	3	4	5	6
1976-77	5.86	5.6	12,400	766	6.17
1977-78	6.63	5.9	14,300	845	5.91
1978-79	7.34	6.4	15,790	1069	6.77
1979-80	8.05	7.0	21,635	1226	5.67
1980-81	8.74	7.1	28,060	1643	5.85

वृद्धि को देखते हुए यह सीमा बढ़ाना उचित ही प्रतीत होता है। लेकिन सिर्फ पूंजी निवेश की सीमा बढ़ाने मात्र से कोई विशेष लाभ नहीं हो सकता। 1974 में किए गये लघु इकाइयों के संगणना सर्वेक्षण से पता चलता है कि कुल इकाइयों की 91 प्रतिशत इकाइयों से प्लांट और मशीनरी में पूंजी एक लाख रुपये तक की लगी हुई थी तथा 97.5 प्रतिशत इकाइयों में 3 लाख रुपये तक पूंजी लगी हुई थी। इसका तात्पर्य यह हुआ कि अधिकांश लघु उद्योगों में पूंजी निवेश बहुत कम था। वास्तव में इस बड़े हिस्से की उपेक्षा नहीं की जा सकती।

रुग्ण इकाइयों की बढ़ती संख्या

एक तरफ तो सरकार लघु उद्योगों के विकास हेतु अत्यधिक प्रयास कर रही है, दूसरी तरफ वह लघु इकाइयों के एक बड़े हिस्से की तरफ यथोचित ध्यान नहीं देती। यही कारण है कि लघु उद्योगों के क्षेत्र में रुग्ण इकाइयों की संख्या बढ़ती जा रही है। सन् 1979 में रुग्ण इकाइयों की संख्या 20,326 थी। जून 1986 तक इन रुग्ण इकाइयों की संख्या बढ़कर1,28,687 दिसम्बर 1988 तक बढ़कर 2 लाख हो गई। बैंकों द्वारा दिये गये कुल ऋण में से 2,141 करोड़ रुपये का ऋण (दिसम्बर 88 तक) इन रुग्ण इकाइयों पर बकाया था। यह रुग्णता सरकार की चिन्ता का कारण है। इससे अधिक चिन्ता और दुःख की बात यह है कि इन रुग्ण इकाइयों में से 80 प्रतिशत इकाइयां फिर से चलने लायक हैं और ऋण का 60 प्रतिशत भाग इन्हीं इकाइयों पर बकाया है। दिसम्बर 1987 में देश में कुल लघु उद्योग क्षेत्र में 22.27 लाख उधार खातों में से 2.04 लाख खाते रुग्णावस्था में थे जिसका अभिप्राय यह है कि देश की प्रत्येक 11वीं लघु इकाई रुग्ण थीं। यह विडम्बना ही है कि देश में लघु उद्योगों की विकास-दर से उनकी रुग्णता दर अधिक है।

लघु एवं कुटीर उद्योग की समस्याएं

लघु एवं कुटीर उद्योगों की सबसे बड़ी समस्या उनकी रुग्णता ही है, जिस पर अविलम्ब ध्यान दिया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त अन्य समस्याओं में कच्चे माल का अभाव, वित्त की कमी, तकनीकी ज्ञान व प्रौद्योगिकी का अभाव, बड़े उद्योगों से प्रतिस्पर्द्धा, विपणन की समस्या कुशल प्रशासनिक प्रबन्धन की कमी तथा सरकार तन्त्र द्वारा उपेक्षा आदि आती है।

निष्कर्ष के रूप में हम यह कह सकते हैं कि यदि सरकार वास्तव में लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास करना चाहती है तो उपर्युक्त समस्याओं का समाधान अविलम्ब किया जाना चाहिए। इस समाधान के बिना लघु एवं कुटीर उद्योगों के सम्बन्ध में सरकार की कोई भी नीति सफल नहीं हो सकती और न ही गांधी जी का कथन, "भारत का मोक्ष उसके कुटीर उद्योग धन्धों में निहित है" चरितार्थ हो सकता है।

सी. 18/54, माता कुण्ड
अर्थशास्त्र विभाग
काशी विद्यापीठ
वाराणसी

पाठकों के विचार

इस पत्रिका में 'पाठकों के विचार' नाम से एक नया स्तम्भ प्रारम्भ किया गया है। इस स्तम्भ में पाठकगण ग्रामीण विकास के विभिन्न पहलुओं पर अथवा इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों पर अपने विचार भेज सकते हैं। ये विचार-ढाई सौ शब्दों से अधिक न हों और सम्पादक, कुरुक्षेत्र, कमरा न० 467, कृषि भवन, नई दिल्ली-110001 के पते पर भेजे जाएं।

इसके लिए कोई पारिश्रमिक देय नहीं होगा परन्तु उन पाठकों को पत्रिका की एक प्रति भेजी जाएगी जिनके विचार इस स्तम्भ में प्रकाशित होंगे।

-सम्पादक

ग्रामोद्योग : वर्तमान स्थिति और संभावनाएं

प्रो. आलोक नाथ झा

भारत की 1991 की जनगणना के मुताबिक अभी भी 74 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है। यहां की अर्थव्यवस्था का आधार अभी भी कृषि ही है। अतएव यह सत्य है कि इतनी बड़ी जनसंख्या की समस्या का समाधान गांव में ही मिलेगा। महात्मा गांधी ने इस बारे में कहा था "ग्रामोद्योग योजना के पीछे भावना यह है कि हम अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति गांवों से करें और देखें कि कुछ आवश्यकताओं की पूर्ति हमारे गांवों द्वारा नहीं हो सकती तब हमें यह पता लगाना चाहिए कि क्या थोड़े से यत्न तथा संगठन द्वारा ग्रामीण जन ही लाभकारी ढंग से इन वस्तुओं की पूर्ति नहीं कर सकते।"

भारत का अतीत ग्रामोद्योग का गौरवपूर्ण अतीत रहा है। प्राचीन यूनान में भी भारतीय हस्तशिल्प की प्रशंसा की जाती थी। कश्मीर की शालें, बनारस की रेशमी साड़ियां और मुरादाबाद के पीतल के बर्तन, मिर्जापुर के गलीचे ऐसे ग्रामोद्योग थे जिनकी मांग विदेशों में थी। प्राचीनकाल में दैनिक उपभोग की वस्तुओं से लेकर सुंदर और कलात्मक वस्तुओं तक की मांग की पूर्ति ग्रामोद्योग द्वारा की जाती थी और वस्त्र उद्योग हमारा सबसे बड़ा उद्यम था। इतिहासकारों के मुताबिक 14वीं शताब्दी में दक्षिण यूरोप को कपास भारत द्वारा भेजी जाती थी।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् ग्रामोद्योग को भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया। ग्रामोद्योग के कार्यक्षेत्र में आने वाले प्रमुख उद्योग हैं — खादी, गुड़ और खांडसारी, हाथ से बनने वाला कागज, मधुमक्खी पालन, लोहारगीरी और कुम्हारगिरी, रेशम, चूना, लाख और औषधि निर्माण के लिए जड़ी बूटी का संग्रह, बांस और बेंत, फल संरक्षण, एल्यूमिनियम के बर्तन, अनाज तथा दालों का प्रशोधन, घानी तेल, कपड़ा, दीयासलाई, अखाद्य तेल और साबुन आदि। आजकल इन उद्योगों से एक करोड़ 18 लाख से अधिक श्रमिकों को रोजगार मिला हुआ है। कुछ ग्रामोद्योगों का क्रमवार अध्ययन किया जा सकता है।

गुड़ और खांडसारी

यह उद्योग गन्ना उत्पादन पर आधारित है। गुड़ और खांडसारी का आंतरिक खपत की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान है। इस उद्यम में उत्तर प्रदेश, गुजरात, राजस्थान, हरियाणा और पंजाब विशेष प्रगति कर रहे हैं। इस उद्योग में 2 लाख व्यक्तियों को पूर्णकालिक तथा अशंकालिक रोजगार प्राप्त होता है। ग्रामीण क्षेत्रों में 5 लाख व्यक्ति ताड़ से गुड़, चीनी, मिश्री, शीरा तथा चटाइयां तथा अन्य सजावटी सामान बनाने के कार्य में लगे हुए हैं। देश में इस उद्योग के तहत 8 करोड़ रुपये मूल्य की खाद्य और अखाद्य वस्तुओं का प्रतिवर्ष उत्पादन होता है जिससे लगभग साढ़े छह करोड़ रुपये के ताड़ गुड़ और डेढ़ करोड़ रुपये की अखाद्य वस्तुओं का उत्पादन अनुमानित है।

एल्यूमिनियम के बर्तन

भारत की 50 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी की रेखा के नीचे जीवन-यापन कर रही है। इस जनसंख्या के लिए पीतल, स्टील तथा अन्य कीमती धातुओं के बर्तनों का प्रयोग करना संभव नहीं है। अधिकांश निर्धन जनता एल्यूमिनियम के बर्तनों का प्रयोग करती है। ग्रामोद्योग के अंतर्गत एल्यूमिनियम के बर्तनों का निर्माण धीरे-धीरे महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करता जा रहा है।

अखाद्य तेल तथा साबुन

भारत में अखाद्य तेलों के उत्पादन में आंध्र प्रदेश को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। अखाद्य तेल प्रायः सभी ग्रामवर्ती क्षेत्रों में उपलब्ध हैं। अखाद्य तेलों के अंतर्गत धान की भूसी से प्राप्त तेल, महुआ की फली से प्राप्त तेल, अरंडी का तेल और नीम का तेल आता है। इन अखाद्य तेलों का प्रयोग साबुन बनाने में किया जाता है। अखाद्य तेलों द्वारा प्रतिवर्ष 10 हजार टन साबुन का निर्माण किया जाता है। अखाद्य तेलों के निर्माण कार्य में तथा साबुन के निर्माण कार्य में 550 सहकारी समितियां संलग्न है। इस ग्रामीण उद्योग द्वारा एक लाख कारीगरों को रोजगार मिला हुआ है।

(शेष पृष्ठ 23 पर)

कहानी

टीलों

✍ हरि वल्लभ बोहरा 'हरि'

शाला के समय विभाग चक्रानुसार दोपहर में पौने घण्टे का विश्राम होता है जिसमें बच्चे अपने टिफिन में लाया खाना खाते और बाद में खेलते। गांव के स्कूल में सारे बच्चे तो खाना लाते नहीं, बमुश्किल दो या चार जनों के पास ही टिफिन था। बच्चे घर जाकर ही दो-चार कौर खा आते। पत्थर की खानों में मजदूरी करते, भेड़ें चराते, लकड़ियां बीनते माता-पिता अपने बच्चों को नियमित शाला भेज देते हैं यही बड़ी बात है। अब यदि यहां उनके सामने मध्यान्ह भोजन की, टिफिन की आदर्श महिमा का बखान करने बैठूं तो गांव के लोग समझेंगे मैं कोई अजूबा हूं या फिर वे मन में हीन भावना से ग्रस्त हो शाला से, मुझसे मुख मोड़ बैठेंगे। इसलिए जो बच्चे टिफिन लाये वे ठीक, न लायें, घर जाकर रूखी-सूखी खा आयें तो वे भी ठीक।

खाने के बाद बच्चे सामने के मैदान में खेलने लगते। मैं भी बरामदे में बैठकर उन्हें खेलता देख आनन्दित होता रहता। एक दिन क्या देखता हूं कि आकाश में तो सूरज चमक रहा है, धूप खिली हुई है, मगर एकाएक पानी की बूंदें गिरने लगीं। सामान्य रूप से कभी-कभार ऐसा हो ही जाता है। मगर गांव के उन बच्चों के लिए यह एक सगुनी मौका था। मैदान में खेल खेलते बच्चों ने ज्यों ही देखा कि धूप में भी पानी की बूंदें गिर रही हैं, कुछ बड़े-बच्चे एकाएक दोनों हाथ जोड़ प्रार्थना की मुद्रा में खड़े हो गए। उनकी देखा-देखी छोटे बच्चे भी हाथ जोड़ आंख मूंद खड़े हो गए। उन छोटे बच्चों के लिए तो यह एक कुतूहल था वे बीच-बीच में एक आंख खोलकर अपने से बड़े बच्चों को देख लेते। उन्हें होठ हिलाते, चुपचाप खड़ा देख वे भी वैसा ही करने लगे। कभी कोई बच्चा आंख खोलकर तत्काल मूंद लेता, कभी कोई। उन बच्चों की यह बाल-सुलभ हरकतें देख मैं मुस्कराये बिना न रह सका। थोड़ी देर में ही बूंदा-बांदी बन्द हो गयी। बच्चे वापस अपने-अपने खेल में मशगूल हो गये।

मगर बच्चों की यह हरकत मेरे लिए एक अबूझ पहेली बन कर खड़ी हो गई। बच्चों ने ऐसा क्यों किया? घण्टी बजते ही सारे बच्चे लाईन बनाकर बरामदे में अपने-अपने स्थान पर आकर बैठ गए। पढ़ाने से पहले मैंने अपने मन की गुत्थी सुलझाना ठीक समझा। एक बड़े लड़के को खड़ा करके पूछ ही लिया "क्यों रे रामू? अभी छींटे पड़े थे तब तुम लोग हाथ जोड़कर क्यूं खड़े हो गये थे?" रामू जवाब देने के स्थान पर शरमा गया। गर्दन झुकाकर खड़ा हो गया। एक-दो से और पूछा मगर जवाब-नदारद। कोई कुछ बताने को तैयार ही नहीं। मेरी भी उत्सुकता बढ़ती ही जा रही थी। तभी मेरी नजर टीलों पर पड़ी। टीलों स्कूल की सबसे होशियार लड़की पढ़ने-लिखने, खेलने-कूदने, बातचीत में, सब में होशियार। इसका बाप पुलिस में कांस्टेबल है और मां पांचवी कक्षा पास है। वह घर पर ही सूत कातने का, कपड़े बुनने का काम करती है। मां-बाप की इकलौती सन्तान— टीलों। मां-बाप अपनी बच्ची को हर क्षेत्र में आगे देखना चाहते थे। टीलों का मन भी पढ़ाई में बहुत था। मुश्किल सिर्फ एक बात की थी। गांव से उनका खेत चार कोस की दूरी पर था। खेत क्या था जमीन का एक छोटा-सा टुकड़ा था, जिसे वे लोग खेत कहकर पुकारते थे। टीलों की मां इस बात से पूरा इत्तफाक रखती थी कि जमीन के उस छोटे से टुकड़े से कमाई नाम भर की भी न थी। जितना समय और श्रम वे लोग उस खेत पर लगाते थे, उतना यदि वे सूत कातने में लगा दें तो मौजूदा कमाई से चार-पांच गुना अधिक कमाई हो सकती है। ज्योंही बरसात होती, टीलों के बाप को खेत में हल जोतना पड़ता। उसके बाद रखवाली के लिए टीलों की मां, दादी और टीलों को खेत पर ही रहना पड़ता। उसका बापू वहीं से साइकिल पर शहर ड्यूटी पर जाता। उन चार-पांच महीनों उस परिवार का रहना-सोना खेत पर बनी झोपड़ी में ही होता। इधर इन दिनों टीलों स्कूल न जा पाती। रोज-रोज चार कोस आना और चार कोस जाना। उसकी छोटी-छोटी टांगे इतनी दूरी पार न कर पाती। टीलों और उसकी मां को इससे बड़ी कोफ्त होती। मगर करें क्या? बूढ़ी दादी को उस जमीन के टुकड़ेनुमा खेत से न जाने कैसा लगाव था। धान बुहार कर जब वे लोग वापिस घर लौटते तो उनके खाते में कभी भी दो माह से अधिक का अनाज नहीं आता। चार माह की मेहनत

और दो माह की कमाई। भला कहां की बुद्धिमता थी। जुलाई-अगस्त में प्रथम स्थान पर रहने वाली टीलों अर्द्धवार्षिक परीक्षा में बमुश्किल पास हो पाती, वार्षिक परीक्षा तक उसकी गाड़ी बड़ी मुश्किल से लाईन पर आ पाती थी। इतने में फिर खेत का काम। धीरे-धीरे उसकी कक्षा भी बढ़ रही थी। ऐसा कब-तक चलता!

उस टीलों को मैंने बड़े प्यार से खड़ा किया। अपने पास बुलाया और शहद से भी मीठे स्वर में उससे स्कूली बच्चों की उस हरकत के बारे में पूछा। पहले-पहल तो वह झिझकी, मगर बाद में मेरे उकसाने पर वह बताने लगी। उसने कहा—"मास्टर जी! जब भी धूप में बारिश होती है, तब दादी कहती है शिवजी और पार्वती स्वर्ग से धरती पर आते है, उस समय जो भी अपनी मन की इच्छा पूरी करने की प्रार्थना करता है वह अवश्य ही पूरी होती है। इसलिए हम सब अपने-अपने मन की इच्छा पूरी करने के लिए प्रार्थना कर रहे थे।"

"अच्छा बताओ टीलों तुमने क्या प्रार्थना की?" मैंने उत्सुकता पूर्वक पूछा।

मेरा प्रश्न सुनकर टीलों कुछ अचकचायी। फिर दोनों हथेलियों में मुंह छिपाकर शर्माने लगी। एक बार मुझे लगा कि मैंने कोई गलत बात पूछ ली है। फिर जी को कड़ाकर उससे दोबारा पूछा। यह हथेलियों में मुंह छिपाकर इनकार स्वरूप सिर हिलाने लगी। मुझे बड़ा गुस्सा आया। मगर उस वक्त मैं अपने पर काबू कर गया। बात आयी-गयी हो गई। मगर मेरे मन में एक फांस रही गयी। नौ वर्ष की छोटी बालिका ऐसी कौन सी प्रार्थना कर सकती है जिसे बताने में उसे शर्म महसूस होती है। जितना अधिक मैं इस विषय पर सोचता जाता उतना ही अधिक उलझता जाता। उस दिन के बाद न तो मैंने टीलों से पूछा, न उसे शर्मिन्दा होने का मौका दिया।

उस साल पानी बिल्कुल नहीं बरसा। चारों तरफ अकाल की मार पड़ने लगी। चारों तरफ राहत कार्य खुल गये। खेतों पर अंकुर तक न फूटे। हर साल चार-पांच महीने के लिए स्कूल बच्चों से खाली हो जाते थे। इस साल एक भी बच्चा कम न हुआ। बच्चों के परिवार खेत पर नहीं गये थे। गांव के आस-पास राहत कार्यों पर मजदूरी करने जाते। इस कारण बच्चे बराबर स्कूल आते रहे। नित्य प्रतिदिन स्कूल आने से बच्चे मुझसे कुछ खुल भी गये थे। हंस बोलकर घण्टों मुझसे बतियाते थे। उन बच्चों में टीलों चतुर, चौकस और चालाक थी। मगर थी तो बच्ची ही न!

एक दिन मैंने बातों-बातों में बच्चों से कहा—"बच्चो। इस साल पानी नहीं बरसा इससे चारों तरफ अकाल पड़ गया है। वरना तुम लोग इन दिनों खेतों पर मौज मार रहे होते। ककड़ी और मतीरों का आनन्द ले रहे होते। बाजरी के सट्टे सेंक सेंक कर खा रहे होते। क्यों ठीक है न।"

कुछ बच्चे मेरी हां में हां मिलाकर रह गये। केवल एक सिर मेरी बात के समर्थन नहीं हिला। मैं इसे भी नजर अन्दाज कर गया। मैंने बच्चो से आगे पूछा "बच्चो! बताओ आज यदि धूप में बारिश हो तो तुम लोग क्या मांगोगे?" मैंने बारी-बारी से बच्चों से पूछना चालू किया। सबसे अपने-अपने मन माफिक उत्तर दिया। किसी ने कहा 'बारीश' किसी ने 'मतीरा', किसी ने 'काकड़ी' किसी ने कुछ तो किसी ने कुछ। अब बारी आयी टीलों की। मैंने उससे भी पूछा—"टीलों, बताओं अभी धूप में बारिश हो तो तुम क्या मांगोगी?"

टीलों ने नजर उठाकर एक बार अपने साथियों को देखा और दूसरी नजर शून्य में देखती हुई बोली, "मास्टर जी, मैं मांगूगी कि हे भगवान मेरे गांव में एक बूंद भी बारिश न हो।" क्या कह रही हो टीलों?" मैंने पूछा। "मैं बिल्कुल नहीं चाहती कि मेरे गांव में बारिश हो, बारिश होगी तो, दादी खेत में हल चलवायेगी, हल चलवायेगी तो अंकुर फूटेगा, फिर हमें रखवाली करने जाना पड़ेगा। तब भला स्कूल कैसे आऊंगी फिर पढूंगी कैसे?" "मगर खेत में अनाज पैदा नहीं होगा तो?" मैंने कहा।

"अभी भी कौन सा हमारे खेतों में पैदा किये अनाज से साल भर पेट भरता है। केवल दो महीने का ही तो धान होता है। मां कहती है इससे ज्यादा तो वह घर बैठी कमा सकती है।"

"तो क्या. . . . . ।

"हां मास्टर जी? उस दिन भी मैंने यही प्रार्थना की थी और आज भी यही प्रार्थना करूंगी, कल भी यही. . . . . ।

"तू इसका मतलब जानती हैं।" "हां जानती हूं। मां कहती है अगर पढ़ना है तो इस प्रकार चार-चार महीने खेतों पर काम करना और स्कूल से गैरहाजिर रहना छोड़ना ही पड़ेगा या तो पढ़ाई या फिर खेतों में घास कटाई।" कहकर टीलों चुप हो गयी। उस छोटी-सी बच्ची ने ग्रामीण शिक्षा की दुर्दशा की सही नब्ज पर हाथ रखा था। हालांकि उसका वह समाधान अतिश्योक्तिपूर्ण लगता है मगर इसके बगैर कोई चारा भी नहीं है। यदि गांवों में बच्चों को पढ़ाना है तो इस प्रकार की अलाभकारी कृषि से मुंह मोड़ना ही होगा तभी बच्चियां पढ़ सकेंगी और अन्य क्षेत्रों में अपना नाम कर सकेंगी।

4087, सिंघवी पाड़ा, जैसलमेर, राजस्थान

समस्याएं समाधान और सम्भावनाएं

✍हरि विश्नोई

हमारे देश के ग्रामीण कारीगरों ने अनेक क्षेत्रों में काफी कुछ ऐसा कार्य किया है जिसे भुलाया नहीं जा सकता। आज भी बहुत पिछड़े हुए ग्रामीण इलाकों में ऐसे अनेक शिल्पी साधनारत हैं, जिनकी कारीगरी बेमिसाल है। मिट्टी, धागा, धातु, पत्थर, शीशे और चमड़े के अलावा बेंत व बांस जैसी अनेक चीजें हैं, जिन्हें अपनी कला और कौशल से उन्होंने सुन्दर एवं उपयोगी स्वरूप प्रदान किया है। यद्यपि उनकी दक्षता और कौशल ने हमारी पारम्परिक विरासत को सुरक्षित किया है, लेकिन वे रोजमर्रा की अपनी जिंदगी में विषम परिस्थितियों से कैसे निपटते हैं इस ओर ध्यान दिया जाना जरूरी है।

शिल्प की महान एवं गौरवशाली परंपरा को प्रोत्साहित करने के लिए देश के विभिन्न हिस्सों में रहने वाले सिद्धहस्त शिल्पियों को 1965 से प्रतिवर्ष राष्ट्रीय पुरस्कार देकर सम्मानित किया जाता है। हस्तशिल्प विकास आयुक्त, भारत सरकार तथा राज्य सरकारों द्वारा जिन क्षेत्रों में विभिन्न पुरस्कार दिये जाते हैं, उनमें से प्रमुख हैं—कुम्भकारी, टेराकोटा, लकड़ी, नक्काशी, बेंत-बांस का उपयोग, धातु एवं पत्थर मूर्तिकला, शाल-बुनाई, छपाई, लौह शिल्प, चित्रकारी, धातु-कर्म तथा कलमकारी इत्यादि। लेकिन केवल पुरस्कार देने और सराहना करने से ही क्या शिल्पकारों का भला हो जाता है? उनकी व्यावहारिक कठिनाइयों का समाधान भी किया जाना जरूरी है।

विभिन्न क्षेत्रों में हो रही प्रगति, अनुसंधान एवं विकास की रोशनी क्या हमारे देश के इन तमाम कारीगरों तक पहुंची या नहीं जो पिछड़े हुए क्षेत्रों में रहते हैं, उनके कुछ जरूरी मुद्दों पर भी गौर करना होगा। क्योंकि हमारे देश में ऐसे शिल्पी भी हैं जो कि अपने गले में विभिन्न तमगे लटकाए हुए भी अपने जीवन की विसंगतियों से जूझ रहे हैं। जबकि समय और श्रम को बचाने और अपना उत्पादन बढ़ाने के लिए उन्हें किफायती और नवविकसित तकनीकें अपनानी चाहिए। पुरस्कार प्राप्त कारीगरों में से अधिकांश ऐसे हैं जो हस्तशिल्प की कलाकृतियों के अलावा रोजमर्रा के जीवन में काम आने वाली वस्तुएं, वस्त्र, पात्र आदि अन्य बहुत-सी चीजें बनाते हैं। किन्तु उनमें सामान्य औजारों का प्रयोग करते हैं। यदि कहीं किसी विधि अथवा औजार आदि में उन्होंने अपने निजी अनुभव और श्रम के आधार पर सुधार किया भी है तो उसे ट्रेड सीक्रेट बनाकर उन्होंने उसे अपने तक ही सीमित बना छोड़ा है।

गांव-देहात में रहने वाले बहुत से शिल्पकार ऐसे हैं जो खुद नवविकसित टेक्नालोजी से नहीं जुड़ते। वे इस डर से इससे दूर रहते हैं कि उनका हुनर उनके हाथ से छूट जाएगा। इस भावना और कारीगरों की मौजूदा दिक्कतों में एक अजब घालमेल है। इसीलिए अब ग्रामीण विकास और प्रौद्योगिकी हस्तांतरण आदि के क्षेत्रों में जरूरी हो गया है कि सही जानकारी को जरूरतमंद लोगों तक सीधे पहुंचाया जाए। इनके लिए ग्रामीण क्षेत्रों में कारीगरों के अल्पकालीन प्रशिक्षण शिविर चलाए जा सकते हैं।

कुछ राज्यों में चाकू, कैंची आदि घरेलू चीजें तथा छोटे-छोटे कृषि यंत्र बनाने वाले को आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है। लेकिन सहायता का स्वरूप वित्तीय न होकर यदि उनसे संबंधित उपकरण, कच्चा माल, सामग्री, कार्यविधि एवं अनुसंधान से जुड़े पहलुओं पर हो तो ग्रामीण कारीगरों को पुराने ढर्रों से मुक्ति मिल सकती है। कुछ कारीगरों की नए औजारों के विकास एवं प्रयोग में रुचि बढ़ रही है। वे नई तकनीकें अपनाने लगे हैं। भट्टी में लोहा तपाकर औजार बनाने वाले लोहार तथा धातु गलाकर ढलाई करने वाले कारीगरों के साथ पहले एक आदमी सिर्फ धौंकनी का पहिया घुमाने के लिए बैठा रहता था, लेकिन अब उसके स्थान पर बिजली का पंखा लगा रहता है।

कारीगरी की दुनिया में आ रहे बदलाव का यह तो एक छोटा सा उदाहरण है। इसके अतिरिक्त ग्रामीण कारीगर अपनी सुविधानुसार और भी बहुत कुछ कर रहे हैं। बस उन्हें जरूरत है मार्गदर्शन, पूंजी एवं बाजार आदि में समुचित सहयोग देने की क्योंकि पिछड़े हुए ग्रामीण इलाकों में बसे हुए अधिसंख्य शिल्पकार गरीबी और पिछड़ेपन से उबरने के लिए प्रयासरत हैं।

हमारे देश में हस्तशिल्प का इतिहास बहुत पुराना है। सिन्धु

घाटी की सभ्यता से सम्बन्धित प्राप्त अवशेषों में हस्तशिल्प की अनेक सुन्दर कृतियां प्राप्त हुई हैं। 200 ई. पूर्व से 300 ई. तक के प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल में हस्तशिल्पी समृद्ध थे। पुरातत्व की खुदाइयों और शिलालेखों से ऐसे भी प्रमाण मिलते हैं कि तब हस्तशिल्प, उत्पादन का मुख्य आधार और बुनकर, कुम्हार, तेल पेरने वाले, बांस आदि का काम करने वाले संघ बनाकर रहते थे। मनुस्मृति के दसवें अध्याय में उल्लेख है कि दक्षिण में स्वर्णकार, लोहार, बढ़ई आदि बहुत बड़ी संख्या में थे। प्राचीन भारतीय शिल्पकला की समृद्धि में उस समय के नरेशों का बहुत योगदान रहा। अंग्रेजों ने भारतीय हस्तशिल्प को हतोत्साहित किया। उसे पिछड़ेपन का प्रतीक कहा जिससे भारतीय हस्तशिल्पियों में निराशा, गरीबी एवं हीन-भावना व्याप्त हो गई और हस्तशिल्प अधिक उन्नति नहीं कर सका।

स्वतन्त्रता प्राप्त करने के पश्चात हस्तशिल्प को जो प्रोत्साहन दिया गया वह पर्याप्त न था। इसके परिणामस्वरूप वैकल्पिक रोजगार की तलाश में भारतीय कारीगरों की पीढ़ियां महानगरों की ओर पलायन कर गईं और पेट की आग ने बहुत से कारीगरों को भट्टों, कारखानों तथा निर्माण कार्यों में अकुशल मजदूर बना दिया। उनकी सृजनशीलता और मनमोहक कला को गरीबी के घुप्प अंधेरे क्रूरता से निगल गए। सवाल उठता है कि दूर-दूर तक विख्यात भारतीय कारीगरों की आर्थिक दशा में सुधारने तथा हस्तशिल्प के विकास हेतु कौन से प्रभावी कदम उठाने होंगे। उचित रणनीति, व्यावहारिक योजनाओं में पर्याप्त निवेश की समय पर आपूर्ति, प्रशिक्षण, प्रौद्योगिकी और विपणन में सहायता से ही ग्रामीण कारीगर चुनौतियों का सामना करने के लिए सक्षम बन सकेंगे।

ग्रामीण कारीगरों की समस्याओं पर दृष्टिपात करने से पूर्व उनके इतिहास तथा कारणों पर ध्यान देना भी आवश्यक है। यह सच है कि देशी प्रौद्योगिकी पश्चिम की अपेक्षा कम खर्चीली और हमारे गांवों के लिए अधिक उपयोगी है। लेकिन यह धारणा बलवती होती जा रही है कि भारतीय ग्रामीण समाज की उन्नति के लिए भारतीय प्रौद्योगिकी पर्याप्त नहीं है, जबकि भारतीय कारीगरी सदैव से बेमिसाल रही है। हर क्षेत्र में श्रेष्ठ कारीगर यहां बड़ी संख्या में रहे हैं। आज भी देहातों में कारीगरों में क्षमता और आत्मविश्वास कम नहीं है। वे जीवन की विषम परिस्थितियों से जूझने की क्षमता रखते हैं। आवश्यकता उनका उचित मार्गदर्शन करने एवं व्यापारिक क्षमता बढ़ाने की है।

कारीगरों को विकास का लाभ पहुंचाने के लिए अभी विविध प्रयास किए जाने शेष हैं। यद्यपि बढ़ई, लोहार, मोची, नाई, धोबी, कुम्भकारों आदि को सरकारी क्षेत्र के बैंकों द्वारा कम ब्याज दरों पर ऋण के रूप में वित्तीय सुविधा प्रदान की जाती है। लेकिन फार्म भरने से लेकर ऋण प्राप्त करने तक की औपचारिकताएं पूरी करना आसान काम नहीं है। इस प्रक्रिया को अत्यन्त सरल बनाया जाना चाहिए।

भारतीय कारीगरों को जिन समस्याओं के कारण विकास का अवसर नहीं मिला, उनमें से प्रमुख हैं:

उचित तकनीकी और आर्थिक मदद का अभाव, रहन-सहन के बदलते आधुनिक तौर-तरीके, स्थिर प्रौद्योगिकी, मांग के अनुरूप उत्पादन क्षमता का अभाव, कच्चे माल की कठिनाइयां सीमित विपणन सुविधाएं, प्रबन्धकीय गुणों का अभाव और व्यावसायिक दृष्टिकोण की कमी।

ग्रामीण कारीगरों, हस्तशिल्पियों आदि को अपना उत्पादित माल हाट, बाजार के अलावा मेलों आदि में प्रदर्शित करने के अवसर उपलब्ध होने चाहिए ताकि उनके उत्पाद लोकप्रिय हो सकें और ग्रामीण क्षेत्रों में किया गया उत्पादन शहरी उपभोक्ताओं तक सीधे पहुंचे। केवल संस्थागत वित्त उपलब्ध कराने मात्र से उनको अधूरा प्रोत्साहन मिलेगा। राज्यों के खादी ग्रामोद्योग बोर्ड तथा सहकारी क्षेत्र के सुपर बाजारों की भूमिका इस दिशा में महत्वपूर्ण हो सकती है।

वस्त्र, खाद्य उत्पाद, चर्म, दरी, पत्थर की मूर्ति, क्राकरी, बेंत से बना सामान यदि सीधे ग्रामीण उत्पादकों से शहरी उपभोक्ताओं को उपलब्ध हो जाए तो दोनों को लाभ होगा और निर्माताओं को उचित प्रतिफल और क्रेता को उचित मूल्य पर अच्छी गुणवत्ता का सामान मिलेगा। महंगे विज्ञापन, पैकिंग और प्रतिस्पर्धा से दूर ग्रामीण हस्तकारों द्वारा बनाया गया सामान अपेक्षाकृत सस्ता होता है। अतः जहां एक ओर यह आवश्यक है कि देहाती इलाकों में रहने वाले शिल्पकारों तक विकसित की गई नई प्रौद्योगिकी की जानकारी पहुंचाई जाए, वहीं यह भी जरूरी है कि उनके द्वारा उत्पादित माल की खपत आसानी से हो, इसके लिए जरूरी उपाय किए जाएं। दस्तकार संगठन बनाकर तथा सहकारिता के आधार पर यह कार्य कर सकते हैं। वे एम्पोरियम के माध्यम से अपने माल की उचित कीमत प्राप्त कर सकते हैं तथा बिक्री बढ़ा सकते हैं।

तमिलनाडु एवं पांडिचेरी के दस्तकारों ने हस्तशिल्प कारीगर 'कल्याण संस्था' के नाम से एक संस्था दक्षिण भारत में गठित की है। यह संस्था अपनी किस्म की पहली संस्था है जो दस्तकारों

को ऊपर उठाने और नए बाजारों का पता लगाने के लिए गठित की गई है। वे विकास आयुक्त (हस्तशिल्प) के सहयोग से पूरे भारत में प्रदर्शनियां लगाएंगे। इस सम्बन्ध में एक प्रदर्शनी नई दिल्ली में भी आयोजित की गई। प्रदर्शनियों में सभी उत्पाद दस्तकार खुद ही सामान तैयार करेंगे और सीधे जनता को बेंचेगे। इससे दस्तकारों को माल के बारे में जनता की प्रतिक्रिया भी सुनने को मिलेगी जिससे भविष्य में उन्हें अच्छा माल तैयार करने में सुविधा रहेगी।

इस संस्था से चार हजार से पांच हजार दस्तकार जुड़े हुए हैं और इसे दो राज्यों से बढ़ाकर छह राज्यों में तथा पूरे देश में फैलाने के प्रयास कर रहे हैं। यदि यही गति जारी रही तो भारतीय हस्तशिल्प से जुड़े कई ऐसे पहलू उभर कर सामने आयेंगे जिनसे भारतीय शिल्पकारों को नई गति और दिशा मिलेगी। इसके लिए ग्रामोद्योग में बने उत्पादनों को भी जन सामान्य तक पहुंचाना होगा और ग्राम श्री जैसे मेलों के आयोजन इसके लिए बेहतर माध्यम सिद्ध हो सकते हैं।

कृषि मंत्रालय के ग्रामीण विकास विभाग द्वारा ग्रामीण प्रौद्योगिकी विकास परिषद के माध्यम से एक मार्केटिंग सेल की स्थापना की गई ताकि कारीगरों को व्यापक स्तर पर प्रोत्साहन देने की दिशा मे कदम उठाए जा सकें। इसी क्रम में मेलों व प्रदर्शनियों का आयोजन, स्थाई विक्रय केन्द्रों की स्थापना तथा अन्य विपणन सम्बन्धी सहायता देने के प्रयास भी किए गए। सम्बन्धित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ग्रामीण क्षेत्रों के महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम तथा ट्राईसेम योजनाओं के लाभार्थियों के अतिरिक्त उनके स्वैच्छिक संगठनों को भी इसमें सम्मिलित किया गया। अतः अब यह आशा की जाती है कि इन प्रयासों से ग्राहकों व विक्रेताओं में परस्पर सम्पर्क के बेहतर अवसरों के अलावा बड़े पैमाने पर आपूर्ति की सम्भावनाएं बढ़ेगी। पैकेजिंग, खादी एवं ग्रामोद्योग, डिजाइन, फैशन-टैक्नोलॉजी तथा ग्रामीण प्रबन्ध के राष्ट्रीय संस्थानों में कार्यरत विशेषज्ञों के सहयोग से आयोजित संगोष्ठियों में देश के ग्रामीण शिल्पियो को आगे बढ़ने तथा बिक्री के लिए आम समन्याओं का हल ढूंढने में मदद मिलेगी। साथ ही साथ बिक्री के लिए अपनाई जाने वाली प्रक्रिया के बारे में विस्तृत जानकारी आधुनिक तरीके से मिलेगी। लेकिन आत्मनिर्भरता हेतु आवश्यक प्रशिक्षण ग्रामीण क्षेत्रों में कारीगरों को दिया जा रहा है। उसके अत्यधिक उपयोग की सम्भावनाओं का पता लगाना भी आवश्यक है।

ग्रामीण कारीगरों की भागीदारी से उनके ज्ञान और अनुभवों के साथ कापार्ट (जन सहयोग और लोक कार्यक्रम एवं ग्रामीण प्रौद्योगिकी विकास परिषद्) नई दिल्ली द्वारा उनके द्वारा की गई कलाकृतियों के माध्यम से साक्षात्कार का अवसर अब तक देश के कई प्रमुख नगरों में प्रदान किया गया है। भोपाल, कलकत्ता, बम्बई, उदयपुर, बंगलौर तथा नई दिल्ली में "ग्राम श्री" मेलों के सफल आयोजन किये जा चुके हैं जिनमें सुन्दर बिछावन, कशीदाकारी, परिधान, शहद, जैम, अचार, कालीन, दरी, अगरबत्ती आदि उनके उपयोगी वस्तुओं की पर्याप्त बिक्री हुई। यह एक अच्छी शुरूआत है तथा इससे ग्रामीण आय में वृद्धि तथा रोजगार के नए अवसरों का सृजन करने में निश्चित रूप से सहायता मिल सकेगी।

लोक कार्यक्रम और ग्रामीण प्रौद्योगिकी विकास परिषद (कापार्ट) चालू वित्त वर्ष में भी "ग्राम श्री" मेलों का आयोजन करेगी। गांवों में भी मेले लगाने की योजना है। ऐसे दो मेले बिहार में लगाए जाऐंगे। जिला ग्रामीण विकास एजेंसी से प्रायोजित और कापार्ट से वित्तीय सहायता पाने वाले शिल्पकारों को मेले में मुफ्त स्थान उपलब्ध कराया जाता है जिसमें गलीचे, दरियां, पारंपरिक सिलेसिलाए कपड़े, खादी और सिल्क के कपड़े, फैंसी शाल, दुपट्टे, चादरें, चमड़े का सामान, पारंपरिक खाद्य पदार्थ, पत्थर और धातु की वस्तुएं, पक्की मिट्टी की वस्तुएं, जूट की वस्तुएं आदि उपभोक्ताओं को सीधे बेचने की व्यवस्था की जाती है।

शिल्पकारों की दुनिया में जो बदलाव आ रहा है "ग्राम श्री" जैसे मेले उस यात्रा का एक हिस्सा भर हैं। गांव, जिले और प्रान्त को लांघकर जो आवाज महानगरों तक आज पहुंची है, उसे देश के कोने-कोने तक ले जाना चाहिए ताकि विभिन्न नगरों और कस्बों में हमारी पारंपरिक कलाएं सीमित क्षेत्रों को तोड़ती हुई पहुंचे। रहन-सहन में हाथ के काम का महत्त्व बढ़ रहा है। अतः उत्पादन बढ़ाने वाले तरीकों और औजारों में सुधार हो रहा है चरखे पर वस्त्र बनते, चरखा कातते तथा सिल्क का धागा बनाते कारीगर अब अपने भविष्य के प्रति आशावान हैं क्योंकि उनके द्वारा बनाई गई चीजें आकर्षक, अच्छी और कलात्मक होती हैं। भारतीय कारीगरों में भी अनेक ऐसे सिद्धहस्त लोग हैं जिन्होंने मशीनी उत्पादन को पीछे छोड़ दिया है।

यह एक शाश्वत सत्य है कि जो कुछ पृथ्वी पर है वह मिटकर भी नहीं मिटता। यही बात पारंपरिक दस्तकारी की भी है। भारतीय कारीगरों की बगिया में भी सुन्दर कोपलें फूट रही हैं तथा सुनहरे भविष्य के द्वार पर आशा की किरणें दस्तक दे रही

हैं। बस हमें इतना ख्याल रखना है कि उन कोमल कोपलों को उगाने वाले हाथों का भी अपना महत्व है। वे अनमोल हैं। समाज और सरकार का उत्तरदायित्व है कि उन्हें सराहें, उन्हें यथासम्भव सहयोग दें ताकि शहरों की चकाचौंध में गांवों के भोले-भाले शिल्पकार कहीं खो न जाएं।

एच-88 शास्त्रीनगर,
मेरठ-250005 (उ. प्र.)

साक्षर करें

डा. सेवा नन्दवाल

कर्त्तव्य की स्लेट पर
हस्ताक्षर करें।
आओं कुछ लोगों को
साक्षर करें।
पढ़ लिख कर हमने अपना
जीवन सुधार लिया।
दुख दरिद्रता को
तन से उतार लिया।।
उनकी ओर देखना
नहीं है हमारा फर्ज?
जो ज्ञान के प्रकाश से
महफूज खड़े कर रहे अर्ज।।
कुछ शब्द ज्ञान के
उन्हें सिखलाएं।
तब ही हम शिक्षित
सार्थक कहलाएं।।

केन्द्रीय विद्यालय,
तोपखाना केन्द्र,
नासिक रोड कैम्प–422102

ग्रामीण औद्योगीकीकरण : गांवों में बेरोजगारी दूर करने का कारगर उपाय

आर्येन्द्र उपाध्याय

गरीबी और बेरोजगारी, देश के सामने आज दो बड़ी विकट समस्याएं हैं। देश की आजादी के बाद इन दोनों समस्याओं से निपटने के लिए सरकार ने कई योजनाएं और कार्यक्रम तैयार किए पर उनमें उम्मीद के मुताबिक सफलताएं नहीं मिलीं उल्टे, नीतियों और कार्यक्रमों पर सही तरीके से अमल नहीं हो पाने के कारण ये समस्याएं आज गंभीर रूप धारण कर गई हैं।

भारत में ग्रामीण बेरोजगारी की समस्या भी उतनी ही गंभीर है जितनी कि विकास की अन्य समस्याएं। ग्रामीण बेरोजगारी की समस्या की जड़ें मुख्य रूप से आर्थिक विकास और जनसंख्या वृद्धि में छिपी हैं। यानी जब तक तेजी से बढ़ती हुई आबादी को न रोका जाए और आबादी के अनुपात में रोजगार उपलब्ध न हों तो बेरोजगारों की तादाद तेजी से ही बढ़ती जाएगी। इसलिए जहां कृषि पर जनसंख्या का दबाव बढ़ता जा रहा हो, गरीबी और बेरोजगारी तेजी से बढ़ रही हो, आर्थिक और मानवीय संसाधनों की कमी हो, तकनीकी विकास का अभाव हो, वहां ऐसी गंभीर परिस्थिति में ग्रामीण बेरोजगारी से निपटने का बुनियादी उपाय ग्रामीण ओद्योगिकीकरण ही नजर आता है जिससे गांव-गांव में लघु और कुटीर उद्योगों का विकास हो और नौकरी की तलाश करने वाले युवकों को बेरोजगार न बैठना पड़े।

भारत की ग्रामीण आबादी लगातार बढ़ती ही जा रही है। सन् 1951 में जहां ग्रामीण जनसंख्या 29.00 करोड़ (कुल जनसंख्या का 82.7 प्रतिशत) थी वहीं 1961 में बढ़कर 36 करोड़ हो गई। 1971 में देश की कुल आबादी में करीब 44 करोड़ की तादाद ग्रामीणों की थी। जबकि 1981 में यही आबादी 52.50 करोड़ तक जा पहुंची। इस बढ़ती आबादी की तुलना में बुनियादी सुविधाएं न होने से गरीबों की तादाद बढ़ी। भारत में गरीबी की रेखा से नीचे जीने वाले ग्रामीणों की तादाद 1960-61 में 13.80 करोड़ थी, जो 1977-78 में बढ़कर 25 करोड़ का आंकड़ा पार कर गई। ग्रामीण जनसंख्या में तेजी से वृद्धि के चलते प्रति व्यक्ति उपलब्ध भूमि की मात्रा लगातार घटती गई, जिसके फलस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी तेजी से बढ़ी। इससे हुआ यह कि गांव का हर नौजवान युवक नौकरी की तलाश में शहर की ओर आने लगा। दूसरे रूप में इसका नुकसान यह हुआ कि कृषि के प्रति उनमें रही सही रुचि भी जाती रही। फिर कृषि क्षेत्र में भी रोजगार के सीमित अवसर होने की वजह से हर ग्रामीण बेरोजगार को तो काम दिया नहीं जा सकता था।

चूंकि भारत एक विकासशील देश है जहां मानव संसाधन और प्राकृतिक संसाधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं, इसलिए ग्रामीण बेरोजगारी को दूर करने का सबसे बड़ा और कारगर उपाय ग्रामीण औद्योगीकरण ही हो सकता है। इसमें गांव-गांव में कम पूंजी से छोटे-छोटे उद्योग लगाए जा सकते हैं और गांवों में बेरोजगारी की समस्या को दूर किया जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे और कृषि पर आधारित उद्योग शुरू किए जा सकते हैं जिनके लिए बहुत ही कम पूंजी की आवश्यकता होती है। कृषि आधारित इन उद्योगों में जैसे — डेयरी, मुर्गी पालन, वानिकी, मछली पालन, मधुमक्खी पालन, रेशम कीट पालन, सूअर पालन, भेड़-बकरी पालन, कताई, बुनाई, हथकरघा उद्योग, जूता उद्योग, ईंट उद्योग, कृषि उपकरण तैयार करना, गुड़ और रोजमर्रा के छोटे-मोटे सामान तैयार करना आदि आ सकते हैं। इसके अलावा ग्रामीण अर्थव्यवस्था के आय स्तर को सुधारने के लिए क्षेत्रीय प्राकृतिक और मानवीय संसाधनों का प्रयोग किया जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योग शुरू हो जाने से शहरों की ओर जनसंख्या का पलायन थमेगा। ग्रामीण औद्योगिकीकरण से कृषि उद्योगों के बीच संतुलित विकास कायम हो सकेगा।

आज विश्व के कई देश लघु और कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन देकर अपनी अर्थव्यवस्था को इतना मजबूत बना चुके हैं कि उनके माल की दुनिया भर की मंडियों में मांग है। स्विटजरलैंड में घड़ियां बनाने का काम लघु उद्योग के रूप में है। यही वहां की अर्थव्यवस्था का ठोस आधार भी है। हमारे देश में तकरीबन साढ़े पांच लाख गांव हैं। इसलिए यदि हम गांवों के आधे हिस्से पर भी गंभीरता से ध्यान केंद्रित करें और कृषि आधारित कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देने पर पूरा-पूरा ध्यान दें तो ग्रामीण बेरोजगारों

की बढ़ती तादाद को चमत्कारिक ढंग से रोक सकते हैं।

प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिंह राव ने इस वर्ष 15 अगस्त के दिन लाल किले से अपने भाषण में ग्रामीण युवकों को रोजगार देने के लिए योजनाओं का ऐलान किया था। ये योजनाएं दो अक्तूबर से लागू हो गई हैं। श्री राव ने महाराष्ट्र और कर्नाटक में चल रहे रोजगार कार्यक्रमों की तरह देश में चुने गए 1752 पिछड़े ब्लाकों में भी रोजगार कार्यक्रम शुरू करने की बात कही। प्रधानमंत्री का कहना था कि इन ब्लाकों में हर बेरोजगार ग्रामीण को साल में कम से कम सौ दिन वैकल्पिक रोजगार दिया जाएगा क्योंकि ज्यादातर खेतिहर ग्रामीण सौ दिन बिना काम के रहते हैं। इसके अलावा प्रधानमंत्री ने कम पढ़े-लिखे बेरोजगारों के लिए भी एक योजना की घोषणा की। इस योजना के तहत ऐसे युवकों को छोटा-मोटा काम शुरू करने के लिए एक लाख रुपए तक का कर्ज देने की बात कही गई है। इसमें साढ़े सात हजार रुपए अनुदान के रूप में हैं। इस प्रकार चालू पंचवर्षीय योजना के आखिर तक अगले तीन साल में दस लाख लोगों को कर्ज रोजगार मुहैया कराने का लक्ष्य तय किया गया है। श्री राव ने बताया कि ग्रामीण कारीगरों को आधुनिक औजार देने का कार्यक्रम पिछले साल 62 जिलों में लागू किया गया था। जबकि इस साल इसके लिए सौ जिले चुने गए हैं। इस योजना का अब तक एक-डेढ़ लाख कारीगर फायदा उठा चुके हैं। इस योजना का सबसे बढ़िया नतीजा यह रहा कि कई कारीगर सुविधाएं मिलते ही अपने-अपने गांव लौट गए और वहां अपना काम जमा लिया। प्रधानमंत्री ने बताया कि समन्वित ग्रामीण विकास योजना, जवाहर रोजगार योजना और इंदिरा आवास योजना में बुनकरों और कारीगरों को पूरी तरह भागीदार बनाया गया है।

योजना आयोग ने आठवीं योजना (1990-95) के परिप्रेक्ष्य एवं विषयों पर एक टिप्पणी में ग्रामीण औद्योगीकीकरण की नीति का समर्थन ग्रामीणों के लिए रोजगार के नए अवसर पैदा करने के लिए किया है। टिपप्णी में कहा गया है कि जब तक हर साल लगभग एक करोड़ नए रोजगार पैदा नहीं होंगे तब तक ग्रामीण बेरोजगारी की समस्या पर आसानी से काबू नहीं पाया जा सकेगा। इसलिए कृषि व कृषि आधारित उद्योगों पर खास ध्यान देने की जरूरत है।

351, मदर डेयरी के पीछे
पटपड़ गंज, दिल्ली

(पृष्ठ 15 का शेष)

हाथ से बना कागज

पश्चिमी देशों की तुलना में हमारे देश में कागज की खपत कम है फिर भी कागज की मांग में तीव्र वृद्धि हुई है। इस बढ़ी हुई मांग की पूर्ति के लिए हाथ से बने कागज उद्योग पर निर्भरता बढ़ जाती है। इस प्रकार इस उद्योग द्वारा 3500 टन से अधिक विभिन्न प्रकार से हाथ के बने कागज का उत्पादन प्रतिवर्ष हो रहा है। इस उद्योग में चार हजार से अधिक व्यक्ति कार्यरत हैं। पांडिचेरी के श्री अरविंद आश्रम द्वारा स्विटज़रलैंड, जापान, अमरीका, ब्राजील और इटली को हाथ से बना हुआ कागज निर्यात किया जा रहा है।

लोहारगिरी, बढ़ईगिरी तथा ग्रामीण कुम्हारी

भारतीय ग्राम्य अर्थव्यवस्था में इनका महत्व शाश्वत बना हुआ है। इन उद्योगों में 8 करोड़ रुपये से अधिक मूल्य की वस्तुओं का उत्पादन प्रतिवर्ष किया जाता है। इस उद्योग में 70 हजार व्यक्ति कार्यरत हैं। कुम्हार द्वारा प्रयोग किए जाने वाले परम्परागत चाक के स्थान पर अब शैला चाक का आविष्कार किया गया है जो विद्युत चालित है। इस चाक के प्रयोग से कुम्हार के श्रम की बचत होती है और उत्पादन की गुणवत्ता तथा मात्रा में भी सुधार हुआ है जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हो रहा है।

उपरोक्त विवरणों के आधार पर स्पष्ट है कि आधुनिक औद्योगिक रचना में ग्रामोद्योग का सर्वथा लोप नही हुआ है जो देश आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था के अग्रणी माने जाते हैं उनमें भी ग्रामोद्योग व लघु उद्योग का महत्वपूर्ण स्थान है जैसे जापान के प्रायः 53 प्रतिशत व्यक्ति छोटे पैमाने के व्यवसायों से अपनी आजीविका बनाते हैं जिनमें पांच से भी कम व्यक्ति कार्य करते हैं। स्विटजरलैंड में भी 33 प्रतिशत लोग अपनी आजीविका ऐसे ही व्यवसायों से चलाते हैं। इस प्रकार अनेक देशों में लघु उद्योग व ग्रामोद्योग जीवित है तह आगे बढ़ रहे हैं तथा बेरोजगारी दूर कर रहे हैं। प्रत्येक समाज में कुछ ऐसी कलात्मक वस्तुएं होती हैं जिनका उत्पादन बड़े पैमाने पर प्रायः संभव नहीं है। कुछ ऐसी वस्तुएं भी हैं जिनकी मांग सीमित होती हैं अतः इनका उत्पादन बड़े पैमाने पर नहीं किया जा सकता। इन्हीं कारणों से आज के विशाल औद्योगिक युग में भी लघु ग्रामोद्योग का महत्व कम नहीं हुआ है। अतः प्रतीत होता है कि भारत में ग्रामोद्योग की काफी संभावनाएं हैं।

पुत्र श्री श्याम नाथ झा,
त्रिवेणी गंज ब्लॉक,
जिला सुपौल (बिहार)

गांवों के कायाकल्प में तत्पर जवाहर रोजगार योजना

✍ सुरेश सिंह

स्वतंत्र भारत के गांवों के विकास में गरीबों के लिए रोजगार के अवसर देने के साथ ही उन्हें मजूदरी भी मुहैया कराने पर विशेष बल दिया गया है। इसी उद्देश्य से विभिन्न रोजगारपरक योजनाओं का श्रीगणेश किया गया। इनमें ग्रामीण जन शक्ति कार्यक्रम (आर. एम. पी.), ग्रामीण रोजगार क्रैश योजना (सी. एस. आर. ई.), काम के बदले अनाज कार्यक्रम, राष्ट्रीय भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम (आर. एल. ई. जी. पी.) जैसे कई कार्यक्रम हाथ में लिए गये। इनसे ग्रामीण अकुशल श्रमिकों को रोजगार दिलाना भारत सरकार का उद्देश्य था। लेकिन एन. आर. ई. पी. तथा आर. एल. ई. जी. पी. दोनों ही के अनुभव उत्साहवर्धक नहीं पाये गये। उनके अमल में खामियां रह गईं और ये कार्यक्रम लक्ष्य से भटक गये। उनमें सर्वसाधारण की भागीदारी की स्थिति भी शोचनीय थी। इनके तहत जो परिसम्पत्तियां सृजित की गईं बाद में वे आर्थिक दृष्टि से प्रायः अनुत्पादक पाई गईं।

जवाहर रोजगार योजना का जन्म

इस पूरे मसले पर पुनर्विचार किया गया और परिणामतः राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम तथा ग्रामीण भूमिहीन रोजगार कार्यक्रम गारन्टी दोनों के विलय के बाद एक ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम बनाया गया और इस प्रकार अप्रैल 1989 में जवाहर रोजगार योजना शुरू की गई। इस बार हरचंद कोशिश यह थी कि पहले की गलतियों की पुनरावृत्ति न हो।

जवाहर रोजगार योजना का मूल उद्देश्य ग्रामीण अंचलों के बेरोजगार या अर्द्ध रोजगार शुदा लोगों को लाभकारी एवं अतिरिक्त रोजगार के अवसर सुलभ कराना है। इनमें स्त्री और पुरुष दोनों ही समान रूप से शामिल हैं। साथ ही सतत रोजगार के अवसर जुटाना, ग्रामीण आर्थिक संरचना को मजबूत बनाना, सामुदायिक और सामाजिक परिसम्पत्ति निर्माण, पारिश्रमिक के स्तरों में सुधार और ग्रामीण जीवन की गुणवत्ता में सर्वांगीण बढ़ोतरी इसके अन्य लक्ष्य हैं।

कुछ प्रमुख विशेषताएं

★ जवाहर रोजगार योजना के कार्यक्रमों के कुल व्यय का 80 प्रतिशत भार केन्द्र का और 20 प्रतिशत राज्य सरकार के खाते से दिया जाता है।

★ केन्द्रीय सहायता की राशि जारी होने के एक सप्ताह के भीतर ही राज्य सरकार/केन्द्र शासित प्रदेश को अपना हिस्सा जिला ग्रामीण विकास अभिकरण या जिला परिषद के जिम्मे कर देना आवश्यक है।

★ राष्ट्रीय स्तर पर कुल संसाधनों का छह प्रतिशत इंदिरा आवास योजना के लिए दिया गया है।

★ 20 प्रतिशत संसाधन दस लाख कूप योजना (मिलियन वेल स्कीम) के लिए सुनिश्चित है।

★ अनुसूचित जाति/अनुसूचित जन जाति या छुड़ाए गए बंधुआ मजदूरों को रोजगार की वरीयता।

★ 30 प्रतिशत रोजगार के अवसर महिलाओं के लिए आरक्षित।

★ दो या अधिक जिलों/ग्राम पंचायतों के संसाधनों को उनके आपसी लाभ के कार्यों के लिए एक साथ मिलाने की छूट।

★ कार्य आवश्यकतानुसार वर्ष भर में कभी भी हाथ में लिये जा सकते हैं, विशेष तौर पर जिन दिनों खेती का काम न होता हो।

★ मजदूरों को रोज दो किलोग्राम अनाज सार्वजनिक वितरण प्रणाली की दरों पर उपलब्ध कराने का प्रावधान है। लेकिन देश के सुधारे गये 1715 विकास खंडों में ऐसे अनाज की कीमत 50 पैसे प्रति किलोग्राम कम पर निर्धारित की गई है।

★ खाद्यान्नों का वितरण सुधारे गये विकास खंडों में केवल सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा ही संभव होगा।

★ किसी भी काम को पूरा करने के लिए ठेकेदारों या बिचौलियों को लगाने की मनाही होगी।

★ कम से कम 60 प्रतिशत संसाधनों को मजदूरी के रूप में खर्च करना जरूरी है।

★ वार्षिक आबंटन का अधिक से अधिक 10 प्रतिशत ऐसी परिसम्पत्ति के रख-रखाव पर खर्च करने का प्रावधान, जिसे राज्य सरकार के किसी विभाग ने अभी अधिगृहीत न किया हो।

★ वार्षिक आबंटित राशि का अधिकतम 20 प्रतिशत प्रशासनिक/आकस्मिक खर्च में लगाने की अनुमति है।

★ जिला ग्रामीण विकास अभिकरण या जिला परिषद अधिकतम 50 हजार रुपये की राशि जवाहर रोजगार योजना में जिला/विकास खंड, ग्राम पंचायत स्तर पर कार्यरत लोगों के प्रशिक्षण पर खर्च कर सकती है।

जवाहर रोजगार योजना के अंतर्गत मिलियन्स वेल स्कीम, इंदिरा आवास योजना, आपरेशन ब्लैकबोर्ड और पारिश्रमिक योजना को सम्मिलित किया गया है।

दस लाख कुंओं की योजना

मूलत: दस लाख कुंओं की योजना राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम/ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गांरटी कार्यक्रम के तहत 1988-89 में शुरू की गई थी। इसका उद्देश्य ऐसे गरीब लघु एवं सीमांत कृषकों को जो अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति से हों या मुक्त हुए बंधुआ मजदूर हों, खुले सिंचाई के कुएं मुहैया करांना था, ताकि वे नि:शुल्क सिंचाई कर सकें। अब यह कार्यक्रम जवाहर रोजगार योजना के अंतर्गत आ गया है। जिन क्षेत्रों में कुएं खोदना व्यवहार्य नहीं है वहां इस योजना के तहत आबंटित राशि लघु सिंचाई के दूसरे तरीकों में लगायी जा सकती हैं।

1989-90 में "दस लाख कुंओं की योजना" के लिए अलग से धनराशि की व्यवस्था नहीं थीं। फिर अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लिए जिला स्तर के निर्धारित आबंटन में से खुले कुओं के निर्माण की व्यवस्था थी लेकिन 1990-91 से यह राशि बढ़ाकर जवाहर रोजगार योजना के कुल खर्च के 20 प्रतिशत तक की गई है।

दस लाख कुंओं की योजना (एम डब्ल्यू एस) के तहत भौतिक व वित्तीय उपलब्धियां :

वर्ष	बनाए गए कुंओं की संख्या	किया गया खर्च (लाख रुपये में)
1988-89	50,345	13,299.50
1989-90	87,634	10,816.41
1990-91	56,431	27,974.26
1991-92	1,72,056	49,503.05
*1992-93	92,283	19,746.51
	4,58,749	1,71,339.73

*दिसम्बर, 1992 तक (अस्थायी)

इंदिरा आवास योजना

यह योजना पहले ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम के अधीन चलाई जाती थी। इसका उद्देश्य अनुसूचित जाति, जनजाति और मुक्त बंधुआ मजदूरों में से निर्धनतम व्यक्ति के लिए मुफ्त मकान निर्माण करना था। फिलहाल यह कार्यक्रम जवाहर रोजगार योजना के अंतर्गत चलाया जा रहा है। इसके लाभार्थी की पहचान का आधार उसकी आय से ही किया जाता है। अत: उनकी प्राथमिकता का क्रम इस प्रकार होता है - मुक्त बंधुआ श्रमिक, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन जाति के उत्पीड़ित परिवार, गरीबी रेखा से नीचे की विधवाओं या अविवाहिताओं के परिवार, अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के परिवार जो बाढ़, अग्नि कांड या भूकंप तथा ऐसी ही अन्य विपदाओं से ग्रस्त हुए हों या अन्य अनुसूचित जाति/अनुसूचित जन जाति के दूसरे परिवार जो गरीबी रेखा से नीचे रह रहे हों।

इंदिरा आवास योजना के लाभार्थी को मकान निर्माण के लिए यह आजादी मिलती है कि वे चाहें तो स्वयं अपनी निर्माण व्यवस्था करें, खुद कुशल कारीगर लगाये या अपनी पारिवारिक श्रम शक्ति से निर्माण करे। इनसे जहां लागत में कमी आयेगी, निर्माण की गुणवत्ता और लाभार्थी को आत्मसंतोष भी होगा।

यथासंभव इस योजना के तहत मकानों का समूहों में निर्माण किया जाता है ताकि उनके मिल-जुलकर उपयोग के लिए विभिन्न सुविधायें दी जा सकें। इस तरह के मकान का क्षेत्रफल 20 वर्ग मीटर निर्धारित किया गया है। इन मकानों के लिए एक रसोई, धुंआ रहित चूल्हा और एक संडास का प्रावधान अनिवार्य है।

प्रति मकान लागत कुल 12 हजार 700 रुपये रखी गई है जिसमें निर्माण के लिए 8 हजार रुपये, संडास तथा निर्धूम चूल्हे के लिए 1400 रुपये और अन्य संरचनात्मक कार्य की लागत जनता सुविधाओं के लिए 3300 रुपये निर्धारित किए गये हैं।

देश में जवाहर रोजगार योजना के अंतर्गत रोजगार सृजन और उस पर हुए खर्च पर अब तक का वर्षवार विवरण इस प्रकार है :-

वर्ष	जवाहर रोजगार योजना के तहत वित्तीय तथा भौतिक उपलब्धि				रोजगार सृजन
	आबंटन	वित्तीय रिलीज (करोड़ रु.)	उपयोग	लक्ष्य	उपलब्धि (लाख श्रमदिन)
1989-90	2630.67	2694.30	2458.11	875.73	864.39
1990-91	2627.80	2540.20	2600.03	929.10	874.56
1991-92*	2620.90	2366.75	2639.33	735.43	808.10
1992-93*	2556.22	2537.97**	1297.72*	776.25	383.54*

* अक्तूबर 1992 तक

** नवम्बर 1992 तक

आपरेशन ब्लैक बोर्ड

वर्ष 1990 से आपरेशन ब्लैक बोर्ड के अंतर्गत भवन निर्माण के लिए धनराशि की उपलब्धता के आधार पर जवाहर रोजगार योजना के तहत प्राइमरी स्कूलों में कक्षाओं के निर्माण पर धन लगाने का प्रावधान है। भवन सामग्री पर अधिक लागत के दृष्टिकोण से आपरेशन ब्लैक बोर्ड के निर्माण में व्यय का सिर्फ 40 प्रतिशत राज्य सरकार के शिक्षा विभाग को खर्चा करना पड़ता है। शेष 60 प्रतिशत धन की व्यवस्था जवाहर रोजगार योजना के अंतर्गत केन्द्र और राज्य सरकारों को 48:12 के अनुपात में करनी होती है।

एक मूल्यांकन

योजना आयोग के कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन (पी.ई.ओ.) ने 1991-92 में जवाहर रोजगार योजना का एक त्वरित अध्ययन किया। यह मूल्यांकन देश के 10 प्रमुख राज्यों—आंध्र प्रदेश, बिहार, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल में किये गए। इस नमूना सर्वेक्षण का आकार अपेक्षाकृत छोटा था और इसमें 20 जिलों की कुल 40 ग्राम पंचायतों के 600 लाभार्थियों पर अध्ययन किया गया। इस अध्ययन से जवाहर रोजगार योजना की जो स्थिति सामने उभर कर आई, वह इस प्रकार थी :-

- ★ रोजगार सृजन के मामले में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जन जाति का हिस्सा 50 प्रतिशत से ज्यादा था। लेकिन महिलाओं के वास्ते जिला स्तर पर 22 से 25 प्रतिशत कार्य सृजित किए गए और ग्राम पंचायतों के स्तर पर 15 से 18 प्रतिशत रोजगार सृजित किए गए।
- ★ इस योजना में पाया गया कि 1989-90 में एक व्यक्ति को औसतन 11.44 दिन, 1990-91 में 15.68 दिन और 1991-92 (सितम्बर, 1991 तक) केवल 12.81 दिन का रोजगार मिल सका।
- ★ परिसम्पत्तियों के रख रखाव पर पूरा ध्यान नहीं किया जा सका।
- ★ कुछ ग्राम पंचायतों ने आबंटित निधि का उपयोग नहीं किया।
- ★ चुने हुए लाभार्थियों में से 89 प्रतिशत ने तैयार परिसम्पत्तियों को उपयोगी बताया, और
- ★ कुछ ग्राम पंचायतों ने कुछ काम करवाने के लिए ठेकेदारों का सहारा लिया।

इसके अलावा इसी संगठन ने देश के 14 राज्यों (आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर पद्रेश और पं. बंगाल) में एक त्वरित नमूना सर्वेक्षण करके इंदिरा आवास योजना का मूल्यांकन किया। इसमें 28 ब्लाक, 56 गांव और 1195 परिवार शामिल किये गये। इनके परिणाम थे :-

- — औसत एक मकान के निर्माण की लागत मात्र 5 हजार रुपये थी।
- — लाभार्थियों का चयन सर्वत्र निर्धारित मानदंडों के अनुसार ही रहा।

- 90 प्रतिशत आवास समूहों में बनाये गये। उनमें 80 प्रतिशत आवास गांव की आबादी के पास थे।
- निर्माण की क्वालिटी तकरीबन 50 फीसदी आवासों के मामले में अच्छी पाई गई।
- लगभग 84 प्रतिशत परिवारों ने उनके लिए आबंटित मकानों के प्रति पूरा या आंशिक संतोष व्यक्त किया।
- कुछ गांवों में ठेकेदारों को लगाये जाने की खबर मिली।
- स्वैच्छिक संगठनों का मकानों के निर्माण, खासकर सैनिटरी संडासों और निर्धूम चूल्हों के उपयोग की प्रेरणा देने में कोई योगदान नही पाया गया।

अब सरकार ने जवाहर रोजगार योजना की कार्यान्वयन की स्थिति का मूल्यांकन साथ-साथ करते रहने की व्यवस्था कर दी है।

गांवों की स्थिति को नजदीक से देखने पर यह पता चलता है कि इस योजना के कार्यान्वयन में पूर्णता नहीं है और उनमें खामियां बनी हुई हैं।

ग्रामीण विकास के विभिन्न कार्यक्रम जिनको जवाहर रोजगार योजना ने हाथ में ले रखा है, कुल मिलाकर वे गरीबी निवारण के काम मे लगे हुए हैं। चालू वित्तीय वर्ष में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों पर विशेष बल दिये जाने के कारण इसकी भूमिका का विशेष महत्व है। यदि उनके संचालन में सावधानी बरती गई और अपेक्षित जन सहयोग भी मिला तो वह गांवों का नक्शा बदलने में सफल होगी।

4/7, ब्लाक दो,
न्यू मिन्टो रोड आपार्टमेंटस,
नई दिल्ली - 110002

लघु कथा

पाती

बनवारी लाल उमर वैश्य

रघुनंदन ने अपनी छबीली को कई पाती लिखी थीं किंतु निरक्षर होने के कारण छबीली पाती लिख नहीं पाती थी और वह दूसरों से पाती लिखवाना अपना घोर अपमान समझती थी।

प्रौढ़ शिक्षा के चलते गांव के लोग धीरे-धीरे साक्षर होते जा रहे थे। डाकिये ने एक लिफाफा दिया। रघुनंदन फूले न समाये। उन्होंने समझा—इस बार छबीली ने अपना दुख-सुख किसी से लिखवाकर भेजा है।

लिफाफा खोलते ही फटी आंखों से रघुनंदन देखता है कि लिफाफे में कोरा कागज है। कागज में काजल के धब्बे हैं। शायद छबीली ने रो-रोकर अपने आंसुओं का कागज में पोंछकर यों ही भेज दिया हो। "काश छबीली साक्षर होती! यह दिन देखने को न आता।" उसका मन कचोट रहा था।

छः महीने हो गये थे। गांव से छबीली की कोई पाती नहीं आई। रघुनंदन को अपने गांव की याद आने लगी। लहलहाते खेत, उफनती नदियां, पायल की रुनझुन, कंगनों की खनखन, बंसवारी के सरगम और अमराई की झंझा.............। "छबीली ने पाती क्यों नहीं भेजी? शायद अपनी मनोव्यथा को वह छिपाती हो।" इसी उधेड़ बुन में रघुनंदन पड़ा था।

"छबीली की धानी चुनरिया हवा में लहरा रही है। उसकी कजरारी आंखे किसी को ढूंढ रही हैं।" रघुनंदन ने ऐसा ही सपना देखा।

दोपहर थी। डाकिये ने एक लिफाफा दिया जिसमें छबीली की लिखी पाती थी। "मेरे प्रियतम! मैं तुम्हारे चरणों की दासी छबीली अब साक्षर हूँ। अब मैं तुम्हें पाती लिखा करूंगी। पति परमेश्वर है। हां, तुम शराब मत पीना। आंगन में लौकी की बेल फैल रही है। उसके सफेद फूल तुम्हें बुला रहे हैं। यह पाती तुम्हें कैसे लगी बताना।"

पाती पढ़ते ही रघुनंदन नाच उठा। अब छबीली पाती लिखने लगी है। उसके सामने छबीली का भोला भाला मुस्कुराता चेहरा भी आ गया था। रघुनंदन ने छबीली की पाती को हृदय से लगा लिया था।

इंकीनगंज,
मिरजापुर

गेहूं: आहार भी, औषध भी

डा. विजय कुमार उपाध्याय

वर्तमान युग में गेहूं संसार भर में मानव-जाति का प्रमुख आहार है। गेहूं को विभिन्न विधियों से हम अपने आहार के लिए उपयोग में लाते हैं। इसके आटे से रोटी, पूड़ी, पूआ, हलवा तथा मिठाइयां इत्यादि बनायी जाती हैं। गेहूं एक पौष्टिक आहार माना जाता है। कुछ समय पहले जर्मनी के एक डाक्टर ने 40 वर्षों तक गेहूं के दलिये पर विभिन्न प्रयोग किये। इन प्रयोगों से प्राप्त आंकड़ों से वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि इससे श्वास (दमा) कोष्ठ बद्धता, कृशता तथा पेट संबंधी अनेक बीमारियों को अल्प समय में ही दूर किया जा सकता है।

हाल में संयुक्त राज्य अमरीका की प्रसिद्ध महिला डाक्टर एन. दिगमोर ने गेहूं पर ही कुछ नये प्रयोग आरंभ किये हैं। उन्होंने गेहूं के पौधों से अनेक असाध्य रोगों को दूर करने का दावा किया है। जिन रोगों को उन्होंने गेहूं के पौधों के रस को पिलाकर ठीक करने का दावा किया है उनमें शामिल हैं—गठिया, चर्म रोग, असमय बालों का पकना, कृशता, पथरी, दंत रोग, नेत्र रोग, हृदय रोग, उदर रोग, दमा, कब्ज, लकवा, तथा कैंसर इत्यादि। परन्तु गेहूं के पौधों के रस के सेवन में कुछ सावधानियां बरतनी पड़ती हैं। जैसे रस निकालकर अधिक देर तक नहीं छोड़ना चाहिए, रस के सेवन से एक घंटा पहले तथा एक घंटा बाद तक कुछ नहीं खाना चाहिए और रस में नमक या नींबू का रस इत्यादि नहीं मिलाना चाहिए।

डा. दिगमोर का विचार है कि गेहूं के पौधों के रस में काफी जीवनदायी तत्व मौजूद हैं। इसमें अनेक विटामिन, क्षार तथा प्रोटीन पाये जाते हैं। इसमें कुछ प्रदूषण रोधी तत्व भी उपस्थित रहते हैं। इससे रक्त तथा नाड़ियों का शोधन होता है। इसके सेवन से शुरू-शुरू में उल्टी तथा दस्त की शिकायत हो सकती है। कभी-कभी सर्दी भी लग जाती है। इसके सेवन से बल तथा ओज की वृद्धि होती है। भूख खूब लगती है तथा स्मरण शक्ति बढ़ती है। बाल काले तथा चमकीले हो जाते हैं।

डा. दिगमोर ने दावा किया है कि गेहूं के पौधों के रस के उपयोग से उन्होंने लगभग 350 किस्म के रोगों को ठीक किया है। स्वास्थ्य लाभ करने वाले रोगियों में कुछ ऐसे भी थे जिनके रोग को डाक्टरों ने असाध्य बताकर उन्हें निराश कर दिया था। इनमें सबसे प्रमुख तथा असाध्य रोग था कैंसर जिसका इलाज डाक्टर आज तक नहीं ढूंढ पाये हैं। परन्तु डा. दिगमोर ने इसे भी ठीक करने का दावा किया है।

गेहूं के पौधों के रस का सेवन करते समय रोगियों को अपने सामान्य आहार में कोई भी परिवर्तन या परहेज करने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। लेकिन कुछ परिस्थितियों में गंभीर रूप से पीड़ित रोगियों को 10 दिन तक सामान्य भोजन से परहेज करवाया जाता है तथा उन्हें हल्का एवं सुपाच्य भोजन जैसे खिचड़ी, फलों का रस, नारियल का पानी इत्यादि दिया जाता है। कभी कभी उपवास भी करवाने की आवश्यकता पड़ती है। उपवास के दौरान गेहूं के पौधों के रस की एक से चार औंस तक की मात्रा एनिमा द्वारा शरीर में पहुंचायी जाती है। लगभग एक सप्ताह तक यही क्रम चलता है। इससे शरीर के भीतर एकत्र विषाक्त पदार्थ मल द्वारा शरीर से बाहर निकल जाते हैं तथा शरीर की सफाई हो जाती है। इससे शरीर में नयी शक्ति का संचार होता है तथा पाचन क्रिया में सुधार होता है। कुछ दिनों के बाद गेहूं के पौधे के रस की थोड़ी-थोड़ी मात्रा रोगी को सुबह तथा शाम पिलायी जाती है तथा सामान्य आहार भी प्रदान किया जाता है।

चिकित्सार्थ गेहूं के पौधों को उगाने की विधि इस प्रकार है। मिट्टी से निर्मित 30 गमले लिये जाते हैं। उनमें काली मिट्टी भर दी जाती है। परन्तु यह ध्यान रखना पड़ता है कि मिट्टी में किसी प्रकार का उर्वरक न मिलाया जाये। इन सभी गमलों को धूप से अलग रखना चाहिए। प्रत्येक दिन एक-एक गमले में लगभग आधी मुट्ठी गेहूं को बो दिया जाता है। जब गेहूं के पौधों की ऊंचाई 5-6 इंच की हो जाये तो उसे जड़ से उखाड़ लेना चाहिए। पौधों की जड़ का भाग काट कर फेंक दिया जाये तथा शेष भाग को सील पर पीस कर उसका रस कपड़े से निकाल लिया जाये। जैसे-जैसे गमले खाली होते जायें उनमें पुनः गेहूं बोते

जाना चाहिए। इस प्रकार प्रति दिन पौधा उपलब्ध होता जायेगा। पौधे को अधिक नहीं बढ़ने देना चाहिए। अधिक से अधिक 7 इंच ऊंचे पौधों को उपयोग में लाया जा सकता है। यह ऊंचाई लगभग 10 दिन में प्राप्त हो जाती है। पांच-छः इंच ऊंचे पौधे अधिक लाभदायक होते हैं। 7 इंच से अधिक ऊंचे पौधे की रोग निवारक क्षमता लगभग समाप्त हो जाती है। पौधों को सील पर पीसने के पूर्व उन्हें जल से अच्छी तरह धो लेना चाहिए। सील पर पीसने के बाद साफ कपड़े से छान कर रस को तुरंत पी लेना चाहिए। रस को अधिक देर तक छोड़ने से उसमें उपस्थित लाभदायक गुण नष्ट हो जाते हैं।

गेहूं के पौधों को यदि सील पर पीसने में कोई कठिनाई हो तो उसे दांत से चबाकर भी खाया जा सकता है। इससे दांत मजबूत होते हैं। पायरिया का कोई रोगी यदि दिन में दो तीन बार गेहूं के पौधों को इस प्रकार चबा कर खाये तो वह शीघ्र ही इस रोग से मुक्त हो सकता है। पीसे हुए पौधे से छान कर रस निकालने के बाद जो लुगदी बचती है। उसे यदि घाव या फोड़े फुंसी पर पुल्टिश के रूप में बांधा जाये तो घाव शीघ्र अच्छे हो जाते हैं। लुगदी को भोजन के साथ चटनी के रूप में भी उपयोग में लाया जा सकता है। यह भी काफी लाभदायक है। इस लुगदी में अनेक विटामिन, क्षार तथा प्रोटीन मौजूद रहते हैं।

डा. दिगमोर की धारणा है कि दूध, दही, पनीर, मांस इत्यादि उतने पौष्टिक नहीं है जितना गेहूं के पौधों का रस। सस्ता होने के कारण गरीब आदमी भी इसका सेवन कर लाभान्वित हो सकता है। यदि नवजात शिशु को गेहूं के पौधों के रस की पांच बूंदें नित्य दी जायें तो उसका शारीरिक विकास अच्छी तरह होगा तथा वह अनेक बीमारियों से मुक्त रहेगा।

डा. दिगमोर के प्रयोगों से यह स्पष्ट है कि गेहूं के रूप में प्रकृति ने हमें इस प्रकार की अमूल्य निधि दी है जिसमें मानव जाति का कल्याण छिपा हुआ है। यह हमारा सर्वप्रमुख आहार तो है ही, रोग निवारक सामर्थ्य की उपस्थिति के कारण यह एक महत्वपूर्ण औषधि भी है। ऐसी औषधि जिस पर अभी वैज्ञानिकों को काफी अनुसंधान करने की आवश्यकता है। इन अनुसंधानों से ही इसमें छिपे हुए गुणों को ढूंढा जा सकता है तथा जनहित में उनका भरपूर उपयोग किया जा सकता है।

प्राध्यापक, भूगर्भ विभाग,
इंजीनियरी कालेज,
भागलपुर - 813210

लेखकों से अनुरोध

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, कविता, संस्मरण, लघुकथा, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिये। कृपया अपनी रचनाएं टाइप कराकर दो प्रतियों में भेजें। जिन रचनाओं के साथ मौलिकता का प्रमाण पत्र संलग्न नहीं होगा, वे स्वीकर नहीं की जा सकेंगी। कृपया रचना के प्रकाशन के संबंध में किसी प्रकार का पत्र व्यवहार न करें। विशेष अवसरों के लिए लेख कम से कम एक माह पहले प्राप्त हो जाने चाहिए। सभी रचनाएं संपादक, 'कुरुक्षेत्र', 467, कृषि भवन, नई दिल्ली-110001 के पते पर भेजें।

गांवों में बेरोजगारी दूर करने के लिए क्रान्तिकारी परिवर्तन आवश्यक

✍अक्षय कुमार

केन्द्र सरकार की प्राथमिकताओं में ग्रामीण विकास का प्रमुख स्थान है। हमारी पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि तथा ग्रामीण विकास पर ज्यादा बल दिया जा रहा है। ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के लिए अधिकाधिक संसाधनों की व्यवस्था की जा रही है।

सत्तहर के दशक के दौरान ग्रामीण बेरोजगारी की समस्या पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित किया गया और इसके लिए अक्तूबर 1978 में 2300 सामुदायिक विकासखंडों से समन्वित ग्राम विकास कार्यक्रम की शुरुआत की गई। दो वर्ष बाद देश के सभी 5004 खण्डों में यह कार्यक्रम लागू कर दिया गया। विश्व बैंक ने भी इसके लिए काफी सहायता दी। सरकार के जून 1990 के मूल्यांकन के अनुसार कार्यक्रम के अंतर्गत 29 प्रतिशत लाभार्थी अनुसूचित जातियों के तथा 16 प्रतिशत अनुसूचित जनजातियों के थे, 20 प्रतिशत महिलाएं थीं और 9 प्रतिशत लाभार्थी ऐसे थे जो अत्यंत निर्धन परिवारों से थे। मार्च 1991 तक के आंकड़ों के अनुसार बैंकों ने इस कार्यक्रम के अंतर्गत 28.98 लाख लाभार्थियों को 1190.3 करोड़ रुपये की राशि ऋण के रूप में और 808.87 करोड़ रुपये सबसिडी के रूप में दिये।

2 अप्रैल, 1990 से संशोधन करके इसमें 30 प्रतिशत की बजाय 50 प्रतिशत लाभार्थियों का अनुसूचित जाति या जनजाति का होना और महिलाओं का 30 प्रतिशत के बजाय 40 प्रतिशत होना आवश्यक कर दिया गया। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का उद्देश्य समाज के सबसे कमजोर वर्गों को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाना है। इसमें छोटे और सीमांत किसानों, भूमिहीन खेतिहर मजदूरों, ग्रामीण दस्तकारों और गांवों के अति निर्धन लोगों को शामिल किया गया है।

ग्रामीण विकास का एक और महत्वपूर्ण कार्यक्रम है जवाहर रोजगार योजना। इसके अंतर्गत लोगों को रोजगार देने की व्यवस्था है। समाज के कमजोर लोगों को काम उपलब्ध कराना इसका उद्देश्य है। मजदूरी नकद या अनाज के रूप में दी जाती है। आठवीं योजना में इस मद में राशि 14 करोड़ से बढ़ा कर तीस करोड़ रुपये कर दी गई।

इसमें कोई शक नहीं कि गरीबी दूर करने के सरकार के कार्यक्रमों का लाभ हुआ है और ग्रामीण रोजगार की स्थिति में सुधार हुआ है। 1972-73 में निर्धनता की रेखा से नीचे जीवन यापन करने वालों का प्रतिशत 51.5 था जो 1987-88 में घट कर 29.9 प्रतिशत हो गया। अनुमान है कि सातवीं योजना के अंत तक यह लगभग 25.8 प्रतिशत रह गया है। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम और जवाहर रोजगार योजना के अंतर्गत रोजगार उपलब्ध कराने की जो योजनाएं हैं उनमें से प्रमुख है—हथकरघा, दस्तकारी, खादी और ग्रामोद्योग, लघु उद्योग, रेशम कीट पालन और राज्य सरकारों द्वारा चलाए गए विशेष ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम।

आइए देखें कि क्या इन कार्यक्रमों का वांछित परिणाम हुआ है। इन कार्यक्रमों का फायदा आमतौर पर उन लोगों और वर्गों तक नही पहुंचा है जिनके लिए कार्यक्रम बनाए गए हैं। प्रबंध में अव्यवस्था, संसाधनों में धांधली, भाई भतीजावाद और लाल फीताशाही से इन कार्यक्रमों की सफलता का केवल ढोल पीटा जाता रहा है और ग्रामीण विकास के नाम पर यदि कुछ हुआ है तो बहुत ही मामूली कार्य। जवाहर रोजगार योजना, जवाहर लाल नेहरू की शताब्दी जयन्ती पर 1989 में शुरू की गई। हालांकि सरकारी तौर पर इसकी समीक्षा प्राप्त नहीं हुई है लेकिन एक स्वयंसेवी संगठन 'सेंटर फार इंडियन डेवलपमेंट स्टडीज' द्वारा किये गये अध्ययन के अनुसार इसके कार्य में अनेक खामियां सामने आई हैं। पहली तो यह कि हर गांव के लिए संसाधन इतने कम हैं जिनसे विकास का कोई सही कार्यक्रम पूरा किया ही नहीं जा सकता। साथ ही जो भी राशि उपलब्ध कराई जाती है उससे ऐसे कार्यक्रमों का कुछ हिस्सा ही पूरा हो पाता है और वर्ष में कुछ ही दिनों तक वह भी कुछ ही परिवारों के लिए रोजगार जुटाया जा सकता है। साथ ही मजदूरी इतनी कम कि गुजारा चलाना मुश्किल। इनसे उत्साह तो दूर, निर्धन वर्गों में निराशा की भावना ही आई है।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास के लिए यह आवश्यक है कि गांवों में रोजगार के अवसर जुटाए जाएं, बेरोजगारी दूर की जाए, उन्हें आर्थिक दृष्टि से समृद्ध बनाया जाए जिससे ग्रामवासियों और गांवों का समन्वित विकास हो, इस उद्देश्य के लिए हमें नए सिरे से विचार करना आवश्यक है।

हाल ही में किये गए संविधान संशोधन से गांवों में स्वायत्त शासन की तीन-स्तरीय व्यवस्था—पंचायती राज प्रणाली लागू की गई है। ग्रामीण विकास का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व ग्राम पंचायतों को सौंपा गया है। लेकिन ग्राम पंचायतें कोई भी फैसला करने में नौकरशाही से किस तरह अलग होंगी यह बात पल्ले नहीं पड़ती। ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को तीन भागों में बांटा जा सकता है। पहली तो बड़ी परियोजनाएं जैसे — विद्युत, संचार व्यवस्था या बड़ी और औसत सिंचाई परियोजनाएं। स्वाभाविक है कि ऐसे में किसी तकनीकी संस्था का सहयोग वांछित भी है और आवश्यक भी। फ्रांस में जहां कि सत्ता के विकेन्द्रीकरण पर बहुत अधिक जोर दिया जाता है वहां भी बड़ी परियोजनाओं के लिए तकनीकी सहयोग क्षेत्रीय परिषदें उपलब्ध कराती हैं। दूसरी श्रेणी में ऐसे निर्माण कार्य लाए जा सकते हैं जो एक ही पंचायत सीमा के अंदर हों लेकिन जिससे अनेक गांव या खण्ड संबंधित हों जैसे सड़कों का निर्माण। इनका दायित्व मण्डल पंचायत, खण्ड या ताल्लुक को सौंपा जा सकता हैं। तीसरी श्रेणी में वे कार्य आते है जिन्हें सही मायनों में ग्राम पंचायतें पूरा कर सकती हैं। इसके अंतर्गत गांवों में सड़कों का निर्माण, तालाबों की खुदाई, लघु सिंचाई परियोजनाएं, स्कूल और प्रकाश आदि की व्यवस्था जैसे कार्य शामिल हैं।

वर्तमान व्यवस्था में भी ये सभी कार्य पंचायतें ही कर रही हैं। लेकिन एक तो सभी जगह पंचायतें नहीं हैं और दूसरे पंचायतों में भी राजनीतिक हस्तक्षेप के कारण उनमें भी वही दुर्गुण आ गए हैं जो कि नौकरशाही में होते हैं। पंचायतों के चौधरी या पंचायतों का शक्तिशाली गुट न केवल भाई भतीजावाद फैलाता है बल्कि पूरी राशि को निहित लाभों के लिए उपयोग में लाता है।

इस स्थिति से निपटने के लिए आवश्यक है कि ग्रामीण इलाकों में धन की आवश्यक व्यवस्था की जाय जिससे गांवों के स्तर पर ही समृद्धि आये। दूसरा धन को खर्च करने की ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि गांवों की इस धन के बारे में किसी के प्रति जवाबदेही न हो अर्थात् अगर किसी गांव के लोग उस धन को बर्बाद करना चाहें तो भी इसकी उन्हें पूरी छूट हो।

वास्तविक विकास के लिए हमें ग्राम पंचायत की बजाय ग्राम को यूनिट मानना होगा। गांवों के सभी सदस्य गांव की संस्था, ग्राम सभा के सदस्य होंगे और हर महत्वपूर्ण मामले पर ग्राम सभा के सदस्य उसी तरह अपनी राय से फैसला करेंगे जैसा कि स्विटजरलैण्ड में गांव-गांव में जनमत संग्रह से होता है। गांव के सारे मसले स्थानीय होते हैं और ऐसा कोई कारण नहीं है कि ग्राम सभा की बैठक महीने में तीन चार-बार करने में कोई दिक्कत पेश आये। ग्राम सभा तीन सदस्यों की एक कार्य समिति बना सकती है जो ग्राम सभा द्वारा किए गए फैसले के कार्यान्वयन पर नजर रखे। इन तीन सदस्यों में एक अनुसूचित जाति या जनजाति का, एक सवर्ण जातियों का और एक धार्मिक अल्पसंख्यकों का प्रतिनिधि रखा जा सकता है। तीन सदस्यों में से एक महिला का होना आवश्यक है। इस प्रकार ग्राम सभा अब अपने कार्यकारी सदस्यों की मार्फत अपने लिए किए जा रहे हर विकास कार्य पर लगातार नजर रख सकेगी।

सभी स्थानीय कार्य गांव को सौंप दिए जाने चाहिए और हर गांव को निर्माण कार्य के लिए एक लाख रुपया प्रति वर्ष दिया जा सकता है। इस प्रकार पूरे देश के लिए यह राशि पांच हजार करोड़ रुपये प्रति वर्ष होगी। बड़े गाँव के लिए कुछ राशि अलग रखी जा सकती है लेकिन कोई भी गांव कितना ही छोटा क्यों न हो, एक लाख रुपये से कम राशि नहीं पाएगा। गांव को यह पूरी छूट होगी कि वह इस राशि को अपनी मर्जी से किसी भी कार्य पर खर्च कर सके। जिला कलेक्टर का यह दायित्व होगा कि वह वर्ष की किसी निश्चित तिथि को अपने आप यह राशि ग्राम सभा के खाते में जमा करवा दे।

ग्राम सभा को अपनी इच्छा से बिना किसी हस्तक्षेप या बाहरी दबाव के यह राशि खर्च करने का अधिकार इस बात की कसौटी होगी कि वह गांव अपने विकास में कितनी रुचि लेता है। साथ ही निचले स्तर से सभी व्यक्तियों में ग्राम सभा का सदस्य होने के नाते जागरूकता पैदा होगी, महिलाएं चौका चूल्हा छोड़ कर खुले वातावरण में आएंगी और लोगों को राजनीतिक प्रशिक्षण मिलेगा। प्रत्येक गांव की सफलता के आधार पर उसे गांव के स्कूल, स्वास्थ्य सेवाएं, स्थानीय निर्माण कार्य आदि का कार्य सौंपा जा सकता है। स्वास्थ्य सेवा, स्कूल और अन्य स्थानीय सेवाओं की सफलता के लिए यह आवश्यक होगा कि ग्राम सभा को इस बात के पूरे अधिकार दिए जाएं कि वह उन कर्मचारियों को हटा सकें या पदोन्नति दे सकें अर्थात ये कर्मचारी किसी खास काडर के नहीं होने चाहिए। गांव के प्रति उनमें निष्ठा तभी आएगी।

इस स्थिति में पहुंचने पर गांवों को समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम और जवाहर रोजगार योजनाएं भी पूरी आजादी के साथ दी जा सकती हैं। हमारी योजना की कमी यह रही है कि हमने ग्रामीण विकास को अलग थलग करके देखा है। जरूरत इस बात की है कि समस्या को ग्राम और शहर के सम्बन्धों से जोड़ कर सही परिप्रेक्ष्य में देखा जाय। अगर गांव शहरों के लिए अनाज उपलब्ध न करायें या विभिन्न उद्योगों या सेवाओं के लिए श्रमिकों की व्यवस्था न करें तो क्या शहर बने रह सकते हैं? और अगर शहर विभिन्न आधुनिक टेक्नोलॉजी तथा उत्पादों को गांवों में न भेजें तो क्या गांव अपना काम बखूबी चला सकते हैं?

हमें इन दोनों योजनाओं को शहरी परिप्रेक्ष्य में देखना होगा। शहर के कारखानों में बनाया गया माल गांवों में बिक्री करके औद्योगिक उत्पादन कई गुना बढ़ाया जा सकता है। लेकिन ऐसा तभी होगा जब गांव में ज्यादा क्रय शक्ति आए। ग्रामीण समन्वित विकास योजना और जवाहर रोजगार योजना से हमें गांव के हर व्यक्ति के लिए रोजगार की व्यवस्था करनी होगी। इन योजनाओं का लाभ सही लोगों तक पहुंचाने के लिए हमें गांवों में शिक्षा का प्रसार करना होगा और विभिन्न विकास कार्यक्रमों के लिए गांवों के लोगों को आगे आने के लिए प्रेरित करना होगा। इस बात की व्यवस्था करनी होगी कि गांवों के लोग घिसी पिटी परंपरागत टेक्नोलॉजी के बजाय आधुनिक तकनीक अपनाएं। आधुनिक टेक्नोलॉजी का मतलब यह नहीं कि गांवों में बड़े बड़े कारखाने खोल कर ही उनका उद्धार किया जा सकता है। गांवों के लिए उन्हीं परियोजनाओं को प्रोत्साहित करना होगा जो उन क्षेत्रों के लिए उचित है और जिनके लिए कच्चा माल वहां आसानी से उपलब्ध है। उदाहरण के तौर पर समन्वित ग्राम विकास योजना के अंतर्गत हथकरघा और दस्तकारी जैसी वस्तुएं बनाई जा सकती हैं। रिपेयर वर्कशाप, चमड़े का काम, जूते बनाने का काम, रेशम के कीड़े पालने का काम स्थानीय स्तर पर आराम से किया जा सकता है। समाज के कमजोर वर्गों के लोगों को स्थानीय सामग्री से चटाई बनाने, टोकरियां बनाने और पंखे आदि बनाने के लिए आवश्यक सहायता दी जा सकती है। आवश्यकता है एक स्वस्थ दृष्टिकोण विकसित करने की। लोगों में चाह जगाने की। उन्हें कुछ बनना है, आत्मनिर्भर होना है और अपना विकास स्वयं करना है।

इसके लिए आवश्यक है कि सबसिडी की प्रथा को समाप्त किया जाय। बरसों से दी जा रही सबसिडी का कितना सही. इस्तेमाल हो रहा है यह सभी को मालूम है। अधिकांश लाभार्थी इस सबसिडी का उपयोग अलाभकारी कार्यों के लिए तो करते ही हैं, बैंकों के ऋण को लौटाने की आवश्यकता भी नहीं समझते। उन्हें बहुत ही कम ब्याज पर अपने काम धंधे शुरू करने के लिए मदद दी जा सकती है। साथ ही ट्राइसेम और डी डब्ल्यू सी आर ए योजनाओं के अंतर्गत समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के लाभार्थियों को तकनीकी प्रशिक्षण दिया जा सकता है।

ग्रामीण माल का उत्पादन तो अनेक जगह होता है लेकिन समस्या है इसकी बिक्री की। इसके लिए सड़कों का जाल बिछाना आवश्यक है। पंजाब और हरियाणा में ग्रामीण क्षेत्रों से माल लाने ले जाने की सुविधाओं के कारण इन दोनों राज्यों में औसत प्रति व्यक्ति ग्रामीण आय शहरी आय से ज्यादा है।

विकास की गति को बनाए रखने और बेरोजगारी के दानव को पनपने से रोकने के लिए आवश्यक है कि कुछ ऐसी व्यवस्था की जाय कि एक बार रोजगार उपलब्ध होने पर वह आदमी फिर बेरोजगार न होने पाए। सरकार ने बेरोजगारी की समस्या दूर करने के लिए आठवीं योजना के दौरान दस करोड़ लोगों के लिए रोजगार के अवसर पैदा करने का लक्ष्य रखा है। इसके अतिरिक्त हर साल औसत एक करोड़ लोगों के लिए रोजगार उपलब्ध कराने का व्यापक कार्यक्रम तैयार किया जा रहा है। देश में आज भी एक-चौथाई आबादी बड़े फटे हाल रूप में जिंदगी बिता रही है। सरकार का लक्ष्य बढ़ती आबादी पर अंकुश लगाना और आहिस्ता-आहिस्ता बेरोजगारी को पूरी तरह समाप्त कर देना है। स्वाभाविक है कि अपने काम धंधे शुरू कर देने पर जोर दिया जा रहा है। इसके लिए हमें चीन का अनुकरण करना होगा। चीन की सबसे बड़ी उपलब्धि यह कही जा सकती है कि जो एक बार नौकरी पर लग जाये उसके फिर बेरोजगार होने की नौबत न आए। चीन ने ऐसी व्यवस्था की है कि किसी भी श्रमिक को काम से हटाने पर मालिक को उसे दो साल के लिए बेरोजगारी भत्ता देना होता है चाहे ऐसा औद्योगिक क्षेत्र में हो, कृषि में या फिर सेवा क्षेत्र में। उद्योग में आर्थिक संकट के दौरान चीन की सरकार उन्हें प्राथमिकता के आधार पर कर्ज उपलब्ध कराती है, करों में छूट देती है और ऐसी अन्य रियायतें देती है जिससे उद्यमियों को मजबूर होकर कारखाने बंद करने न पड़े और बेरोजगारी की स्थिति पैदा न हो। लेकिन अगर कोई कर्मचारी बेरोजगार हो भी जाए तो दो वर्ष की अवधि में बेरोजगारी भत्ता प्राप्त करने के दौरान वह वैकल्पिक नौकरी खोज सकता है, व्यावसायिक प्रशिक्षण ले सकता है या फिर अपना काम धंधा

(शेष पृष्ठ 40 पर)

भारतीय समाज और नारी उत्थान

✍देवेश कुमार शर्मा

प्राचीन काल से ही भारतीय समाज में नारी की लक्ष्मी, सरस्वती, पार्वती और दुर्गा के रूप में पूजा होती है। प्राचीन काल में इसी बात को स्वीकार करते हुए मनु ने अपने ग्रन्थ "मनुस्मृति" में कहा था कि जहां नारी की पूजा होती है, वहीं देवता निवास करते हैं।

सिंधु घाटी सभ्यता काल में मातृप्रधान समाज का होना नारी के प्राचीन गौरव को सिद्ध करता है। उस काल की नारियां जरा भी पुरुष से पीछे नहीं थीं। इससे यह कहा जा सकता है कि यह काल नारी के गौरव से सुशोभित था।

मुगल काल (ग्यारहवीं सदी से सत्रहवीं सदी) को नारी पतन का काल कहा जा सकता है। इस काल में नारी को भोग विलास की वस्तु मात्र माना जाता था। समाज में उसे कोई ऊंचा स्थान प्राप्त न था। उसे विवश होकर अपने घर अथवा चहारदीवारी के अंदर ही रहना पड़ता था। इतना सब कुछ होते हुए भी रानी कर्णवती, मीराबाई, रजिया, रानी पद्मिनी आदि स्त्रियों ने कूटनीतिज्ञ एवं साम्राज्ञी बनकर सिद्ध कर दिया कि नारी को पतित मानना पूरी तरह अनुचित है।

सामाजिक पुनर्जागरण काल में महान समाज सुधारक राजा राम मोहन राय ने सती प्रथा की समाप्ति, विधवाओं के पुनर्विवाह, स्त्री शिक्षा आदि पर जोर दिया। महात्मा गांधी ने भी अछूत उद्धार के साथ साथ नारी मुक्ति के लिए भी प्रयास किया। आधुनिक कवियों ने नारी पीड़ा को समझा। गुप्त जी ने पुरुष वर्ग के स्वार्थ को उजागर करते हुए लिखा है:

"नरकृत शास्त्रों के बंधन हैं, सब नारी ही को लेकर,
अपने लिए सभी सुविधाएं, पहले ही कर बैठे नर।"

सुभद्रा कुमारी चौहान ने—"खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी" लिखकर नारी को यह बताने का प्रयास किया है कि वह शौर्य और साहस में पुरुष से पीछे नहीं है।

इस प्रकार समाज सुधारकों के सामूहिक प्रयास, पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव, देश में सामाजिक और राजनीतिक चेतना तथा प्रगतिशील विचारधारा के फलस्वरूप नारी दासता से मुक्ति की ओर अग्रसर हुई। आज एक ओर नारी को भोग विलास की वस्तु, संतानोत्पत्ति के साधन व मनोरंजन की वस्तु के रूप में विज्ञापनों और फिल्मों में प्रस्तुत किया जा रहा है वहीं दूसरी ओर वह राजनीतिक, विधिवेत्ता, अर्थशास्त्री, प्रशासक, कवि, चिकित्सक और समाजसेवी बनकर समाज को अपना योगदान दे रही है।

बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में राष्ट्रीय आंदोलन के उदय से नारी मुक्ति आंदोलन को काफी प्रोत्साहन मिला। राष्ट्रीय आंदोलन में बड़ी संख्या में महिलाओं ने भी भाग लिया। सन् 1918 के पश्चात् वे राजनीतिक आयोजनों में भी भाग लेने लगी। सन् 1927 में स्थापित आल इण्डिया वीमेन्स कांफ्रेस, नारी उत्थान की दिशा में उल्लेखनीय संस्था है।

स्वतंत्रता के पश्चात्

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 व 15 में स्त्रियों और पुरुषों को पूर्ण समानता की गारंटी दी गयी तथा लिंग के आधार पर भेदभाव न करने की बात कहीं गयी लेकिन नारी को क्या वास्तव में आज समानता का स्थान प्राप्त है? सत्य तो यह है कि राजनीतिक और संवैधानिक समानता के फल महिलाओं के मात्र उस वर्ग तक ही पहुंच सके हैं जिसके पास शिक्षा या सामाजिक प्रतिष्ठा है।

स्त्रियों के अधिकारों की रक्षा के लिए सरकार ने जो कानून बनाये, वे मुख्यतः निम्न प्रकार हैं:

1. **सन् 1952, विशेष विवाह अधिनियम :** इसमें अन्तर्जातीय विवाह को वैध घोषित किया गया तथा वर व कन्या के लिए विवाह की न्यूनतम आयु 21 व 18 वर्ष निश्चित की गयी।

2. **सन् 1955 हिन्दू विवाह अधिनियम :** इसके द्वारा वैवाहिक जीवन में समरसता बनाए रखने, विशेष आधारों पर विवाह के संबंध को समाप्त करने अर्थात तलाक की अनुमति दी गयी।

3. **सन् 1956, हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम :** इसमें लड़की को लड़के के साथ समान सह-उत्तराधिकारी बना दिया गया।

4. **सन् 1961, दहेज निवारक अधिनियम :** इसमें दहेज प्रथा

के कारण नारियों पर होने वाले अत्याचारों पर रोक एवं दोषी पाए जाने वाले व्यक्ति को छः माह की सजा या पांच हजार रुपये जुर्माने का प्रावधान है।

इसके अतिरिक्त 1976 का 'समान मजदूरी अधिनियम' 1978 का 'बाल विवाह संशोधन अधिनियम', 1983 में बना 'आपराधिक दण्ड संहिता अधिनियम', तथा 1986 में पारित 'महिला अश्लील प्रस्तुतीकरण विरोध कानून' भी प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं।

यह सच है कि सरकार ने नारी उत्थान हेतु अनेक कानून बनाये, लेकिन प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि उन कानूनों का ठीक तरह से पालन क्यों नहीं हुआ? निश्चित ही वे कानून सामाजिक परम्पराओं, रूढ़ियों तथा अशिक्षा के कारण प्रभावी नहीं हो सके, जिसके फलस्वरूप स्त्रियों की स्थिति पूर्ववत् ही बनी रही। संविधान की व्यवस्था से स्त्रियों को केवल मताधिकार का समान अवसर मिला है, एक सामान्य स्त्री की समस्या पूर्ववत् है और उसका शोषण हो रहा है। सामजिक व सांस्कृतिक क्रान्ति के अभाव में भारतीय समाज में आज भी दहेज प्रथा प्रचलित है। विधवा पुनर्विवाह आज भी समाज में अपना स्थान नहीं बना सका है। स्त्री श्रमिकों को पुरुषों की अपेक्षा कम मजदूरी दी जाती है एवं अल्पायु में विवाह भारतीय समाज में आज भी विद्यमान हैं।

नारी उत्थान हेतु महत्त्वपूर्ण सुझाव

भारतीय नारी की उपरोक्त समस्याओं को देखते हुए निम्नलिखित सुझाव महत्त्वपूर्ण हैं:

1. सरकार ने स्त्रियों के अधिकारों की रक्षा हेतु जो कानून बनाये हैं, उनकी सही जानकारी स्त्रियों, विशेषकर ग्रामीण स्त्रियों तक पहुंचायी जाये। आज स्थिति यह है कि अधिकांश स्त्रियां अपने अधिकारों तथा कल्याण योजनाओं से अनभिज्ञ हैं। अतः यह आवश्यक है कि सरकार द्वारा पारित अधिनियमों या कानूनों का व्यापक प्रचार-प्रसार करना चाहिए।
2. स्त्रियों को इन कानूनों से अवगत कराने के लिए स्वयंसेवी संस्थाओं को भी आगे आना चाहिए।
3. स्त्रियों को शिक्षित बनाने के लिए एक देशव्यापी एवं शक्तिशाली अभियान चलाया जाना चाहिए क्योंकि निरक्षर स्त्रियों के लिए सरकारी कानून तथा कल्याण योजनाएं व्यर्थ हैं।
4. वर्तमान कानूनों को लागू किये जाने की प्रक्रिया को प्रभावी होना चाहिए अर्थात बाल-विवाह, दहेज प्रथा, तलाक, सन्तान गोद लेने की प्रथाओं की बुराइयों को दूर करने के लिये बने कानूनों का उल्लंघन करने वालों को कठोर दण्ड दिया जाना चाहिए।
5. नारियों की सामाजिक स्थिति सुधारने के लिए उन्हें पुरुषों की भांति स्वतंत्र रूप से अपनी आजीविका कमाने में सक्षम बनाया जाना चाहिए।
6. महिलाओं में अपने अस्तित्व के प्रति जागृति उत्पन्न की जानी चाहिए। यह आवश्यक है कि नारियों को अपने पिछड़ेपन का ज्ञान हो और वे समझें कि अपने उत्थान के लिये उन्हें स्वयं आगे आना होगा।

इस पुरुष प्रधान समाज में जब तक व्यक्तियों के दृष्टिकोण में परिवर्तन अर्थात सोचने का ढंग नहीं बदलता तब तक स्त्रियों को समानता का स्थान मिलना मुश्किल है। स्त्रियों को अपने स्वतंत्र अस्तित्व के लिये संघर्ष करना चाहिए, परन्तु यह संघर्ष पाश्चात्य नारी मुक्ति आन्दोलन की तरह न होकर भारतीय संस्कृति एवं आदर्शों के अनुरूप ही होना चाहिए। नारी मुक्ति आन्दोलन स्त्रियों को आत्म-गौरव प्रदान कर सकता है। लेकिन यह आन्दोलन एक आदर्श को लेकर किया जाना चाहिए।

जैन मन्दिर के समीप,
58, गोपालगंज,
सागर (म. प्र.) 470001

गांवों में रोजगार हेतु प्रशिक्षण

डॉ० अजय जोशी

गांवों में बेरोजगारी की समस्या गम्भीर होती जा रही है। साधनों के अभाव में गांवों के नौजवानों को पर्याप्त शिक्षा नहीं मिल पाती है न ही उन्हें कोई प्रशिक्षण मिलता है जिससे वे कोई काम धंधा खोल सकें। विगत कुछ वर्षों में गांवों से शहरों की ओर रोजगार हेतु आने की प्रवृत्ति बढ़ी है। यदि ग्रामीण युवा वर्ग को ग्रामीण क्षेत्रों में ही रोजगार उपलब्ध हो जाये तो सम्भवतः वे अपने ही गांवों में रहना अधिक पसन्द करेंगे।

खादी और ग्रामोद्योग आयोग तथा राज्य ग्रामोद्योग बोर्ड, ग्रामोद्योगों की स्थापना व संचालन सम्बन्धी आवश्यक प्रशिक्षण सुविधाएं उपलब्ध कराते हैं। प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति ग्रामोद्योगों की स्थापना करके व्यक्तिगत रूप से अथवा खादी ग्रामोद्योग संस्था/समिति बनाकर बहुत कम ब्याज दरों पर ऋण प्राप्त कर अपना उद्योग खोल सकता है। ग्रामोद्योगी उत्पादों के विपणन की भी समस्या नहीं है। खादी तथा ग्रामोद्योग आयोग तथा राज्य बोर्डों के बिक्री केन्द्रों, खादी ग्रामोद्योग भवनों के बिक्री केन्द्रों के माध्यम से ग्रामोद्योगी उत्पादों का विपणन किया जाता है। इन उत्पादों की मांग में तेजी से वृद्धि हो रही है। इन कलात्मक वस्तुओं के निर्यात की मात्रा में भी धीरे-धीरे वृद्धि हो रही है। अतः इस क्षेत्र में रोजगार के अवसर बढ़ने की सम्भावना है।

ग्रामोद्योगों हेतु कई प्रशिक्षण केन्द्र देश भर में कार्यरत हैं। इन प्रशिक्षण केन्द्रों में विभिन्न उद्योगों के लिए कारीगर, व्यवस्थापक, सुपरवाइजर आदि हेतु विभिन्न प्रशिक्षण पाठ्यक्रम संचालित किये जाते हैं। इन प्रशिक्षणों में से ज्यादातर के लिए व्यक्ति का साक्षर होना ही पर्याप्त है। कुछ एक विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रमों में मैट्रिक या इन्टर की परीक्षा पास होना आवश्यक है। विभिन्न उद्योगों के लिए विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों की अवधि तीन से 13 महीनों के बीच है। इन पाठ्यक्रमों में प्रशिक्षण पाने वाले व्यक्तियों को 200 रुपये प्रतिमाह की छात्रवृत्ति भी दी जाती है।

प्रशिक्षण को सफलतापूर्वक पूरा करने के पश्चात बेरोजगार ग्रामीण युवक अपना उद्योग लगा सकते हैं। उसे व्यक्तिगत कारीगर के रूप में अपना कार्य करने के लिए खादी ग्रामोद्योग बोर्ड द्वारा 5,000 रुपये या इससे अधिक जरूरत के अनुसार वित्तीय सहायता मिलती है। राष्ट्रीयकृत बैंक उन्हें न्यूनतम दरों पर ऋण देते हैं। प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति संस्था या समिति बनाकर आर्थिक सहायता के रूप में ऋण लेना चाहें तो उन्हें भी खादी ग्रामोद्योग उत्पादों के उत्पादन हेतु ऋण मिल सकता है।

विभिन्न उद्योगों से संबंधी प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति उद्योग लगाकर कार्य नहीं करना चाहते तो भी वे खादी तथा ग्रामोद्योग संस्थाओं में रोजगार प्राप्त कर सकते हैं। संस्थाएं भी प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्तियों को नौकरी देने में प्राथमिकता देती हैं।

देश के विभिन्न भागों में विभिन्न उद्योगों से सम्बन्धित प्रशिक्षण केन्द्रों के नाम पते उनके द्वारा चलाये जाने वाले पाठ्यक्रमों, पाठ्यक्रमों की अवधि शैक्षणिक योग्यता आदि का विवरण तालिका में दिया गया है।

ग्रामोद्योगों हेतु प्रशिक्षण केन्द्रों की सूची

क्र. सं	उद्योग का नाम	आवश्यक योग्यता	प्रशिक्षण काल	प्रशिक्षण केन्द्र
1	2	3	4	5
1.	तेल उद्योग	साक्षर	1. परम्परागत कामगार हेतु एक माह 2. गैर परम्परागत कामगार हेतु दो माह	1. लोक भारती शिवदास पुरा (जयपुर) 2. शिवशंकर घाणी तेल उ०स०लि० (टोंक) 3. खादी मंदिर (बीकानेर) 4. जनता घाणी तेल उ०स०लि० (जोधपुर)
2.	कुटीर दियासलाई	मैट्रिक पास	पांच माह	1. सघन क्षेत्र विकास समिति सेवापुरा जिला वाराणसी (उ०प्र०)

				2. खादी ग्रामोद्योग विद्यालय खादी तथा ग्रामोद्योग कमीशन सिम्पोली रोड, बोरीवली बम्बई (वेस्ट) 92
3.	अगरबत्ती उद्योग	हाई स्कूल	दो माह	1. अम्बा सर्वोदय संघ गांधी नगर, बिनावा नालूर (तमिलनाडु) 2. टेस्टिंग क्वालिटी कन्ट्रोल एण्ड स्टेन्ड्राईजेशन सेंटर खादी तथा ग्रामोद्योग कमीशन, दहानु (महाराष्ट्र)
4.	हाथकागज उद्योग 1. व्यवस्थापकीय	इन्टर साईस	एक वर्ष	1. हैण्डमेड पेपर ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूट पूना (महाराष्ट्र)
	2. कारीगर प्रशिक्षण	साक्षर	तीन माह	
5.	ग्रामीण कुम्हारी उद्योग			1. सेन्ट्रल विलेज पोटरी इण्डस्ट्रीज, खादी ग्रामोद्योग कमीशन, खानपुर, जिला बेलगांव (कर्नाटक)
	1. मास्टर पोर्टर कोर्स	साक्षर	छह माह	
	2. सुपरवाईजर कोर्स	इन्टर साईस	11 माह	
6.	ग्रामीण खाण्डसारी उद्योग			
	1. सुपरवाईजर कोर्स	हाईस्कूल परन्तु विज्ञान वालों को प्राथमिकता	छह माह	1. गुड़ खाण्डसारी ग्रामोद्योग ट्रेनिंग कनवाली जिला, देहरादून (यू०पी०)
	2. आर्टिजन		तीन माह	
7.	चूना उद्योग			
	1. आर्टिजन कोर्स	साक्षर	तीन माह	1. टेकनिकल एक्स्टेन्शन सर्विस सेंटर, लाईम इण्डस्ट्रीज, खादी ग्रामोद्योग कमीशन, माहोल जिला शोलापुर (महाराष्ट्र) 2. टेकनिकल एक्स्टेन्शन सर्विस सेंटर, खादी ग्रामोद्योग कमीशन देहरादून (यू०पी०)
8.	रेशम उद्योग			
	1. सुपरवाईजर कोर्स	साक्षर	नौ माह	1. फाइबर रिसर्च ट्रेनिंग कोरा केन्द्र सिम्पोली रोड, बोरीवली (वेस्ट) बम्बई-12
	2. आर्टिजन कोर्स		तीन माह	
9.	ताड़गुड उद्योग	साक्षर	तीन माह	1. इचार्ज सेंटर ताड़गुड़ एवं ताड़ उत्पादन इन्स्टीट्यूट, अरुन फिला कॉलोनी, मद्रास
10.	चर्मोद्योग	साक्षर	एक वर्ष	1. विकास अधिकारी (चर्म), खादी ग्रामोद्योग चर्मालय, गोपुरी वर्धा (महाराष्ट्र)
11.	अखाद्य तेल व साबुन (आर्टिजन) 1. लान्ड्री सोप	उद्योग	3 माह	1. सेवा सदन भीलवाड़ा 2. खादी ग्रामोद्योग विद्यालय, शिवदासपुरा (राजस्थान)
	2. टायलेट सोप		6 माह	3. त्रिम्बक विद्या मन्दिर, नासिक (महाराष्ट्र)

ग्रामीण क्षेत्रों के बेरोजगार नौजवानों को चाहिये कि वे अपनी रुचि का प्रशिक्षण प्राप्त कर अपना उद्योग लगाएं अथवा विभिन्न खादी ग्रामोद्योगी संस्थाओं में सेवाएं देकर रोजगार प्राप्त करें।

मानद् सम्पादक : मरु व्यवस्था चक्र, प्राध्यापक, व्यवसाय प्रशासन विभाग, श्री जैन पी.जी. कालेज, गंगाशहर, बीकानेर राजस्थान

व्यक्तित्व का विकास

✍डा० आनंद तिवारी

सामान्यतया व्यक्तित्व का आशय व्यक्ति की योग्यता, पदनाम, रहन-सहन, भाषा-शैली आदि बातों से होता है। किंतु विचारकों की दृष्टि से व्यक्तित्व एक विस्तृत अर्थ वाला शब्द है। उनके अनुसार व्यक्ति की मानसिक उच्च स्तर की क्रियाओं का समूह व्यक्तित्व होता है। व्यक्तित्व के अंतर्गत मानवीय विकास से संबद्ध वे समस्त पहलू आते हैं जो व्यक्ति की बौद्धिक एवं मानसिक क्रियाओं से संबंधित हैं।

मनोवैज्ञानिकों की दृष्टि से व्यक्तित्व एक मानवीय गुण है जो दो रूपों में व्यक्ति को मिलता है। एक तो आनुवांशकीय रूप में जो उसे अपने माता-पिता से मिलता है और दूसरे व्यक्ति को अपने परिवेश से मिलता है। परिवेश के अंतर्गत पारिवारिक, सामाजिक तथा भौतिक, ये तीनों महत्वपूर्ण हैं। इनके द्वारा व्यक्तित्व का समुचित विकास संभव होता है। व्यावहारिक जीवन में अक्सर यह देखने को मिलता है कि विशेष पेशे तथा कला में निपुण माता-पिता (दोनों अथवा किसी एक) के बच्चों में वे गुण जन्मजात आ जाते हैं और यदि परिवार एवं समाज में ऐसे गुणों के विकास हेतु उचित वातावरण मिल जाता है तो ये बच्चे युवावस्था में उस पेशे या कला में विशेषज्ञता प्राप्त कर लेते हैं। जहां तक यह प्रश्न है कि आनुवांशिकीय गुण तथा पारिवारिक, इन दोनों में कौन-सा घटक व्यक्तित्व के विकास में अहम् भूमिका निभाता है, तो यह कहना उचित होगा कि व्यक्तित्व के विकास में परिवेश अधिक महत्वपूर्ण घटक है। जिस प्रकार एक अच्छा चित्रकार अविशिष्ट सामग्री से सुंदर चित्र बना सकता है, ठीक उसी प्रकार अच्छा परिवेश किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व को विकसित कर सकता है।

मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास की शुरुआत जन्म से होती है और यह अनवरत रूप से जीवन-भर चलता रहता है। बच्चा जब जन्म लेता है तो उसकी केवल दो आवश्यकताएं होती हैं एक तो सुरक्षा और दूसरा संतोष। ये दोनों आवश्यकताएं आजीवन चलती रहती हैं। यदि उसकी ये आवश्यकताएं सहज एवं स्वाभाविक रूप से पूरी होती रहती हैं तो ठीक है। किंतु जब उसे पहली बार इस बात का अहसास होता है कि उसकी आवश्यकताएं पूरी नहीं हो रही हैं तो उसमें कुंठा एवं निराशा की भावना उत्पन्न हो जाती है। बालक में "मैं" व "अन्य" की भावना उसी समय जन्म लेती है। फलतः उसके व्यक्तित्व के विकास की शुरूआत हो जाती है। युवावस्था में जब आवश्यकताएं पूरी नहीं होती हैं अथवा समुचित पारिवारिक तथा सामाजिक सुरक्षा नहीं मिलती है तो ऐसी स्थिति में युवा मन में असंतोष जन्म ले लेता है। यही वह समय है जब व्यक्ति को अच्छे-बुरे का ज्ञान होता है और उसे मालूम होता है कि वह कैसा है और वह कैसे जीना चाहता है। उसे जीवन-यापन हेतु किस रास्ते का चयन करना है। इन सभी प्रश्नों का संबंध व्यक्ति की महत्वाकांक्षाओं से है जो प्रत्येक व्यक्ति की भिन्न-भिन्न होती है।

परिपक्व एवं अच्छे व्यक्तित्व की माप चिन्हों द्वारा की जा सकती है। इनसे व्यक्ति अपने व्यक्तित्व को भली-भांति समझ सकता है और व्यक्तित्व को विकसित कर सकता है। परिपक्व एवं अच्छे व्यक्तित्व का संबंध अनेकानेक पहलुओं से होता है जिनमें कुछ महत्वपूर्ण पहलू निम्न हो सकते हैं:

दोहरा व्यक्तित्व न हो : सामान्यतया व्यक्ति दोहरा व्यक्तित्व रखता है। एक तो जैसा वह वास्तव में है और दूसरे वह अन्य लोगों के सामने स्वयं को अच्छा प्रस्तुत करता है। इन दोनों में काफी अंतर होता है और व्यक्ति की अधिकांश परेशानियां इसी दोहरे व्यक्तित्व के कारण उत्पन्न होती हैं। इसका कुपरिणाम यह होता है कि व्यक्ति दूसरों को धोखा देते हुए स्वयं धोखा खा जाता है। व्यक्तित्व के विकास में ऐसा व्यक्तित्व महत्वपूर्ण अवरोध है। इससे बचने का प्रयास करना चाहिये।

दूसरों के प्रति सम्मान एवं विश्वास की भावना : व्यक्तित्व के विकास के लिये आवश्यक है कि जो सम्मान एवं विश्वास व्यक्ति स्वयं के प्रति रखता है वही सम्मान एवं विश्वास उसे दूसरों के प्रति भी रखना चाहिये। व्यावहारिक जीवन का एक महत्वपूर्ण नियम है कि प्रत्येक क्रिया की प्रतिक्रिया अवश्य होती है। यह

नियम जीवन के सभी क्षेत्रों में क्रियाशील होता है। व्यक्ति दूसरे व्यक्तियों के प्रति जो सम्मान एवं विश्वास रखेगा, दूसरे व्यक्तियों से उसे अपेक्षित सम्मान एवं विश्वास अवश्य मिलेगा। इससे व्यक्ति को स्वयं तथा दूसरों की दृष्टि में कभी भी अपमान का सामना नहीं करना पड़ेगा।

इच्छाओं को स्थगित करने की क्षमता : व्यक्ति की इच्छायें अनंत होती हैं जो पूर्णतया कभी भी समाप्त नहीं होती हैं। परिपक्व व्यक्तित्व हेतु यह आवश्यक है कि व्यक्ति अपनी वर्तमान इच्छाओं पर नियंत्रण कर सके अर्थात् उसमें इतना मनोबल हो कि वह इच्छाओं को कुछ समय के लिये स्थगित कर सके। सामान्यतः आर्थिक कठिनाइयों के कारण इच्छाओं को स्थगित किया जाता है किंतु यहां इच्छाओं को स्वेच्छा से स्थगित करने की ओर संकेत है।

कई आवश्यकताओं की पूर्ति न हो सकना : यदि व्यक्ति की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति सामयिक रूप से होती रहती है तो वह संतुष्ट रहता है, किंतु यदि आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती है तो उसमें असंतोष की भावना उत्पन्न हो जाती है। परिणामतया व्यक्ति कुछ ऐसा नया कार्य खोजने का प्रयास करता है जिससे उसे अधिकतम संतोष प्राप्त हो। ऐसा प्रयास उसके व्यक्तित्व में सहयोगी होगा। किंतु अत्यधिक असंतोष की स्थिति उत्पन्न नहीं होनी चाहिए अन्यथा वह कुण्ठाग्रस्त हो जायेगा और फिर कुछ भी नहीं कर सकेगा।

वास्तविकता का सही ज्ञान होना : व्यक्ति को संसार की वास्तविकता का भली भांति ज्ञान हो। वह जीवन में सफलता के चरमोत्कर्ष पर तभी पहुंच सकता है जब वह प्रत्येक कार्य इस मान्यता को लेकर करे कि संसार उसकी इच्छानुसार नहीं बना है, संभव है कि उसे कभी भी परिस्थितियों के साथ समझौता करना पड़े। परिस्थितियों से समझौता करने के लिये उसे सदैव तत्पर रहना चाहिये।

अभिव्यक्तियां समाज की अभिव्यक्तियों से मिलती जुलती हों : यदि व्यक्ति की अभिव्यक्तियां समाज की अभिव्यक्तियों से मिलती जुलती होंगी तो व्यक्ति जिन मूल्यों तथा उद्देश्यों को चुनेगा उन्हीं मूल्यों एवं उद्देश्यों के अनुसार चलेगा। ऐसी स्थिति में दूसरों की बातों के बजाय स्वयं की बातें मानेगा तथा उन पर अधिक विश्वास भी करेगा।

निष्पादित कार्य की प्रामाणिकता स्वयं दे सके : जो भी कार्य व्यक्ति ने निष्पादित किया है उसके संबंध में यह कहना कि वह उसने प्रभावशाली ढंग से सम्पन्न किया है। व्यक्ति द्वारा किसी भी कार्य के संबंध में ऐसी प्रामाणिकता देना अच्छे एवं परिपक्व व्यक्तित्व की पहचान है।

व्यक्ति स्वयं का मूल्यांकनकर्त्ता हो : आमतौर पर एक व्यक्ति दूसरे व्यक्तियों का मूल्यांकन सहज तथा आसानी से कर लेता है। व्यक्तित्व के विकास का संबंध व्यक्ति के स्वयं के मूल्यांकन से है। ऐसे मूल्यांकन द्वारा अपनी कमजोरियों का पता लगा सकता है। वह स्वयं को बाहर से देख सकता है और स्वयं पर हंस सकता है। इससे वह स्वयं में सुधार कर सकता है।

अन्य व्यक्तियों से स्वस्थ एवं मधुर संबंध बनाये रखना : यदि व्यक्ति के अन्य लोगों से स्वस्थ एवं मधुर संबंध हैं तो उसे संतोष मिलेगा। किंतु ऐसा तभी संभव है जबकि व्यक्ति यह चाहे कि जो स्वतंत्रता मुझे मिली है वही दूसरे व्यक्तियों को भी मिलनी चाहिये। उसे दूसरे लोगों की बातों को समुचित महत्व देकर स्वीकार करना चाहिये, भले ही वह उस बात से सहमत न हो।

सहा. प्राध्यापक, वाणिज्य,
268 इंदिरा कालोनी,
सागर (म. प्र.)

(पृष्ठ 8 का शेष)

के मत्थे दोष मढ़ देने के अपने सहज स्वभाव के कारण असामाजिक तत्व का नाम देकर भले ही संतोष कर लें पर वह वास्तव में होगा हमारी सामाजिक व्यवस्था में भीतर ही भीतर फैल रहे एक महारोग का लक्षण। इन सब के निराकरण के लिए हमें ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ाने के लिए गंभीरता से विचार करना होगा।

73, तरुण विहार,
सेक्टर 13, रोहिणी,
दिल्ली-110085

शिशु के लिए जहर है गर्भावस्था में धूम्रपान

डा. रमाशंकर राजभर

प्राचीनकाल से ही धूम्रपान या तम्बाकू का सेवन एक लोकप्रिय शौक रहा है इसका सेवन अमीर से गरीब और शिक्षित से लेकर अशिक्षित सभी समुदाय, सभी वर्ग के लोग बड़ी दिलचस्पी से करते हैं। धूम्रपान केवल पुरुष वर्ग तक ही सीमित नहीं है बल्कि धूम्रपान के प्रति स्त्रियों का झुकाव बड़ी तेजी से बढ़ रहा है।

यह सर्वविदित है कि धूम्रपान सभी उम्र के स्त्री-पुरुषों के लिए स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत ही हानिकारक है। लेकिन गर्भावस्था में तम्बाकू का सेवन मां और शिशु दोनों के लिए बहुत ही नुकसानदायक है। गर्भावस्था में तम्बाकू सेवन से शिशु पर क्या प्रभाव पड़ता है हम इसी पर मुख्य रूप से विचार करेंगे।

हमारे देश में लोग धूम्रपान या तम्बाकू का सेवन विभिन्न माध्यमों से जैसे सिगरेट, बीड़ी, सुर्ती, पान, हुक्का, चिलम इत्यादि के रूप में करते हैं। ग्रामीण महिलाएं अक्सर सुर्ती, बीड़ी या हुक्का चिलम को पीती हैं।

तम्बाकू का सेवन स्वास्थ्य के लिए क्यों हानिकारक?

तम्बाकू निकोटियाना टोबेकम नाम पौधे की पत्तियों से प्राप्त किया जाता है। तम्बाकू को जलाने पर लगभग 4000 पदार्थ पैदा होते हैं जिसमें सबसे अधिक हानिकारक या जहरीले पदार्थ निकोटीन, टार और कार्बन मोनो आक्साइड है।

अन्य मुख्य हानिकारक पदार्थ हैं—कार्बन डाई आक्साइड, नाइट्रिक आक्साइड, अमोनिया, वाष्पशील नाइट्रोसोअमीन, हाइड्रोजन साइनाइड, नाइट्रिल, वाष्पशील हाइड्रोकार्बन, अल्कोहल, एल्डिहाइड और कीटोन है।

तम्बाकू पीने पर टार मुख से तथा निकोटीन और कार्बन मोनो आक्साइड फेफड़े और मुख दोनों से अवशोषित होते हैं।

टार का प्रभाव

टार मुख्य रूप से कैंसर पैदा करने वाला पदार्थ है जो शरीर में मुख्य रूप से फेफड़े, कंठ, मुख, ग्रासनली, मूत्राशय और अग्नाश्य का कैंसर पैदा करता है।

कार्बन मोनो आक्साइड का प्रभाव

इससे आक्सीजन ले जाने की रक्त की क्षमता कम हो जाती है जिससे शरीर में आक्सीजन की कमी होने लगती है।

निकोटीन का प्रभाव

निकोटीन से शरीर में हृदय की बीमारी, दिमाग की बीमारी, धमनियों की बीमारी, एथेरोस्वेलेरोसिस मुख्य रूप से होती है और फेफड़े की बीमारी में एमफाइसेमा और ब्रांकाइटिस मुख्य हैं।

गर्भावस्था में धूम्रपान कैसे हानिकारक?

जैसा हम बता चुके हैं कि धूम्रपान में (सिगरेट में) कार्बन मोनो आक्साइड लगभग 40 प्रतिशत मिलती है। जब गर्भवती महिला तम्बाकू का सेवन करती है तो उसके रक्त में कार्बाक्सी होमोग्लोबिन की मात्रा 7 से 8 प्रतिशत बढ़ जाती है इसका कारण यह है कि होमोग्लोबिन के साथ कार्बन मोनोआक्साइड की संयुक्त होने की प्रवृत्ति आक्सीजन की तुलना में 210 गुना अधिक होती है और होमोग्लोबिन और कार्बन मोनो आक्साइड के मिल जाने से कार्बाक्सी होमोग्लोबिन बनता है। परिणामस्वरूप मां के रक्त में आक्सीजन की मात्रा कम होने लगती है। इससे मां के गर्भ में स्थित शिशु के रक्त में भी आक्सीजन की कमी होने लगती है। हम जानते है कि एक निश्चित मात्रा में आक्सीजन की पूर्ति होना शरीर में होने वाली विभिन्न प्रकार की क्रियाओं के लिए अति आवश्यक है। रक्त में आक्सीजन की मात्रा कम होने का बुरा प्रभाव मां से अधिक गर्भ में स्थित शिशु पर पड़ता है। शिशु का शारीरिक विकास और मानसिक विकास बुरी तरह से प्रभावित होता है। इस तरह के बच्चे का वजन प्रायः कम होता है।

धूम्रपान से मिलने वाला निकोटीन मां के रक्त से प्लेसेन्टा को पार करके शिशु के रक्त में पहुंच जाता है। निकोटीन से धमनियां सिकुड़ जाती हैं। अपरिपक्व शिशु पैदा होने के अवसर अधिक रहते है। गर्भावस्था के प्रथम 6 महीने में गर्भपात होने की संभावना बराबर बनी रहती है और अन्तिम तीन महीने में,

रक्तस्राव की संभावना बढ़ जाती है। कुल मिलाकर गर्भावस्था में धूम्रपान मां और शिशु दोनों के लिए हानिकारक है। गर्भावस्था में गर्भपात, रक्तस्राव और अपरिपक्व बच्चे पैदा होने की प्रबल संभावना बनी रहती है। ऐसे बच्चों में रोग प्रतिरोध क्षमता का अभाव होता है। फलस्वरूप ये बच्चे शीघ्र ही विभिन्न प्रकार के रोगों से ग्रसित होते रहते हैं।

धूम्रपान करने वाली मां द्वारा शिशु को दूध पिलाने से भी निकोटिन बच्चे के शरीर में पहुंच जाता है। अतः गर्भवती महिलाओं और स्तन पान कराने वाली माताओं को धूम्रपान नहीं करना चाहिए। उससे न केवल महिला रोग ग्रसित होती है बल्कि भावी संतान भी जन्म से पहले ही रोगी व अशक्त हो जाती है। इसलिए महिलाओं को कम से कम अपनी संतानों के स्वास्थ्य की खातिर तो धूम्रपान बंद करना होगा। इससे मां व बच्चे दोनों का स्वास्थ्य अच्छा रहेगा। साथ ही देश की भावी पीढ़ी का स्वरूप सशक्त और सुदृढ़ होगा। इसी में सबका कल्याण है।

जी. एस. वी. एम. मेडिकल कालेज
कानपुर

पृष्ठ 32 का शेष

शुरू करने की ट्रेनिंग लेकर अपना रोजगार शुरू कर सकता है। श्रम सेवा कंपनियों के माध्यमं से चीन में 80 लाख लोग रोजगार प्राप्त कर चुके हैं। भारत सरकार भी इस क्षेत्र की उपयोगिता समझने लगी है और आठवीं योजना में इस क्षेत्र में 57 लाख लोगों को रोजगार उपलब्ध कराने का लक्ष्य है। इस क्षेत्र के अंतर्गत व्यापार, होटल और रेस्तरां, परिवहन और संचार, जमीन जायदाद कार्य, सामुदायिक सेवाएं तथा सामाजिक और कार्मिक सेवाएं करना शामिल है। चीन के इसी जादुई चिराग से देश की कुल 112 करोड़ की आबादी में से लगभग पांच करोड़—4.5 प्रतिशत बेरोजगार हैं। जब चीन जैसे विशाल देश ने इन योजनाओं को अपना कर आशातीत सफलता प्राप्त की है तो कोई कारण नहीं कि हम घोर निर्धनता की जिंदगी बिता रहे एक-चौथाई बेरोजगारों का जीवन न सुधार सकें। सरकार के इरादे नेक हैं, पैसा वह दे ही रही है, गांवों में रोजगार उपलब्ध कराना उसकी सर्वोच्च प्राथमिकता है, कुछ उपलब्धियां भी हुई हैं और निष्पक्ष होकर कहा जा सकता है कि पहले के मुकाबले गांवों के परिवेश में सुधार भी हुआ है। लेकिन इसी पैसे के सही उपयोग से लोगों का सार्थक सहयोग प्राप्त करके हम सफलता की नई ऊंचाइयां छू सकते हैं। अगर हम नई नीति को सचाई से अपनायें और गांवों के दुख दर्द को समझें तो वह दिन दूर नहीं जब गांवों में समृद्धि होगी, आधुनिकता होगी और बेरोजगार शायद ढूंढ़े भी नहीं मिलेगा। आवश्यकता है केवल नीति में सुधार की, सही दृष्टि से कार्यान्वयन की और निश्चित संकल्प की।

बी एफ-5, डी डी ए फ्लैट्स,
मुनीरका, नई दिल्ली-110067

राज्यों के पंचायत मंत्रियों द्वारा संविधान अधिनियम 1992 की समीक्षा

ग्रामीण विकास राज्य मंत्री श्री रामेश्वर ठाकुर ने कहा है कि कर्नाटक, बिहार, त्रिपुरा, उड़ीसा और गुजरात ने पहले से ही पंचायतों से संबंधित 73वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 के प्रावधानों के अनुसार कानून या संशोधन पारित कर दिए हैं। राज्यों के पंचायत मंत्रियों की समिति की पहली बैठक को संबोधित करते हुए मंत्री महोदय ने कहा कि इस संबंध में अन्य राज्यों को पहल करनी चाहिए और इस वर्ष के अंत तक कानून तैयार करके उन्हें पारित करने का प्रयास करना चाहिए।

मंत्री महोदय ने समिति को बताया कि पंचायती राज के कार्यान्वयन के लिए प्रशिक्षण देने के मामले में, तीन प्रमुख संस्थानों में कई कार्यशालाएं और प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। ये प्रमुख संस्थान हैं : लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासनिक अकादमी, मंसूरी, भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली और राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान, हैदराबाद। इसके अतिरिक्त खड़गपुर के भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान ने भी एक कार्यशाला आयोजित की है जिसमें पूर्वोत्तर राज्यों के कर्मचारियों ने भाग लिया।

देश में पंचायती राज के कार्यान्वयन की प्रगति की समीक्षा के लिए श्री रामेश्वर ठाकुर की अध्यक्षता में सात सदस्यीय समिति का गठन किया गया है। यह समिति 73वें संशोधन संविधान अधिनियम, 1992 के प्रावधानों के अनुसार पंचायती राज के शीघ्र कार्यान्वयन के लिए दिशा निर्देश सुझायेगी। समिति बारी-बारी से विभिन्न राज्यों में देश में पंचायती राज के कार्यान्वयन की समीक्षा के साथ-साथ अनुभवों और विचारों का आदान प्रदान भी करेगी।

आर. एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी (डी एल) 12057/93
पूर्व भुगतान के बिना डी. पी.एस.ओ. दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

RN/708/5.
P&T Regd No. D (DL) 12057/9
Licenced under U (DN)-5
to post without pre-payment at DPSO, Delhi-5

राष्ट्रीय पर्यावरण परिषद् की स्थापना

सरकार ने प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में राष्ट्रीय पर्यावरण परिषद की स्थापना की है। यह परिषद राष्ट्रीय पर्यावरण समिति का स्थान लेगी और उसमें विभिन्न विशेषज्ञों को शामिल किया जाएगा। परिषद का कार्य पर्यावरण और वन मंत्रालय को पर्यावरण नीति से संबंधित मामलों पर और राष्ट्रीय महत्व के मामलों पर परामर्श देना होगा।

पर्यावरण और वन मंत्रालय के अनुसार यह परिषद महत्वपूर्ण नीति निर्धारण के मामलों पर गहराई से विचार विमर्श करेगी और सौंपे गये मुद्दों पर मंत्रालय को परामर्श देगी।

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली - 110001 द्वारा प्रकाशित और आकाशदीप प्रिन्टर्स, नई दिल्ली - 110002 द्वारा मुद्रित